रोटी का टुकड़ा

Rotti Kā Tukdhā

लेखक

शिवनारायण श्रीवास्तव

Shiva Narayan Shrivastav

किताब महल

इलाहाबाद

1945 L.

प्रथम संस्करण, १९४४

प्रकाशक—किताब महल, ज़ीरो रोड, इलाहाबाद
मुद्रक—दीक्षित प्रेस, इलाहाबाद।

अपनी सफ़ाई

यह छोटा-सा कहानी-संग्रह देहकानों-मजलूमों की भाषा में लिखी गई है, क्योंकि मैं भी उसी भाषा का बिरादरी हूँ। देहली क्लाथ मिल के गेट पर खड़े-बैठे दिल में लहर-सी उठती थी कि मैं भी कुछ कहानियाँ लिखूँ—ऐसी कहानियाँ जो आप-बीती हों या जिनका सामना साथी मजदूरों-किसानों को रोज़ करना पड़ता हो। लेकिन जब मैं अपने ज्ञान और अपनी कमजोरियों पर ध्यान दौड़ाता तो हिम्मत छूट जाती थी। सोचता था, हम मजदूरों को घुट-घुट कर मरना है ही, आज के नक्क़ार-खाने में हमारी तूती की आवाज़ कौन सुनेगा? न मेरे पास भाषा, न मेरे पास शब्द! भाव दिल में उमड़ते, टीस होती, पीड़ा होती दुख से। अपमान से दिल मसोस कर रह जाता, लेकिन अपने दिल के दर्द को, अपनी दबी हुई पीड़ा, अपने चोटीले घावों को बाहर निकाल दुनिया को दिखाने की मेरी हिम्मत ही नहीं होती थी। मेरे अन्दर वह कला ही नहीं थी जिसका मुलम्मा चढ़ा कर जिसके सहारे अपने भावों को चटकीला-चमकीला बना कर मैं जनता के सामने रख सकता। लेकिन मैंने हिम्मत बाँधी और अपनी अनगढ़, कुघड़ बोली में ही अपनी बात कहने का निश्चय कर लिया। नतीजे में यह कहानी-संग्रह आपके सामने है।

इस संग्रह में मैंने गाँव की अबलाओं, उनके बच्चों, उनके मर्दों की राम कहानियाँ दी हैं। मजदूरों के दिलों के जलते फफोले भी कुछ कहानियों में आये हैं। कहानियाँ सच्ची, दर्दनाक घटनाओं पर आधा-

रित हैं, इसलिये उनमें चाहे कुछ और क्यों न हो, सचाई तो है ही! पाठकों से प्रार्थना है कि वे थोड़ा समय निकाल कर मज़लूमों की कहानी मज़दूर की ज़बानी सुनें। मुमकिन है इन कहानियो के पढ़ने-सुनने के बाद वे हमारे हमदर्द हो जायँ।

मैं अपने प्रकाशक जी को धन्यवाद देता हूँ। उन्होंने मेरे जैसे मज़दूर का यह संग्रह छाप कर मेरे ऊपर और मेरे साथी मज़दूरों पर बड़ी कृपा की है।

अन्त में मैं विश्वविदित विद्वान और किसान-मज़दूर नेता—राहुल सांकृत्यायन—का आभार मानता हूँ, जिनकी पुस्तकें पढ़कर मैंने स्वयं अपने बारे में बहुत कुछ जाना समझा। अगर राहुलजी यहाँ होते तो मैं पहिले उन्हीं को यह संग्रह दिखाता।

१ मई, १९४५

विनीत

शिवनारायण श्रीवास्तव

१

रोटी का टुकड़ा

भुलई के संसार में दुखनी और एक बूढ़ी माता के सिवा और कोई नहीं था। उसके पिता की मृत्यु पहिले ही हो चुकी थी।

भुलई के पिता की मृत्यु होते ही उसके ऊपर मुसीबतों के पहाड़ टूट पड़े थे। उसके पिता ने कुछ रुपये बचा रखे थे। कुछ दिनों तक तो उसकी गुज़र उन पैसों से चली। बाद में तंगी शुरू हुई।

भुलई चुपचाप बैठा था। आज वह बहुत उदास मालूम होता था। उसके चेहरे पर मायूसी की रेखायें नज़र आ रही थीं। भुलई की उमर २० वर्ष की थी।

"दुखनी, अरे दुखनी, एक गिलास पानी तो दे।" भुलई ने अपनी वहिन से कहा।

"अच्छा भैय्या," कहती हुई दुखनी घर के अन्दर गई। और हाथ में पानी का गिलास लिये हुये वापस आ भुलई के सामने खड़ी हो गई। भुलई ने उसके हाथ से पानी का गिलास ले लिया।

"क्यों री दुखनी, माँ की इस वक्त कैसी तबियत है?"

"बुख़ार है।"

भुलई पानी पी कर उठ खड़ा हुआ और घर के अन्दर चला गया। उसकी बुढ़िया माँ एक चारपाई पर पड़ी हुई थी। चारपाई पर सिर्फ़ एक गुदरी बिछी थी। कुछ मैले-कुचैले कपड़े उसके सिरहाने तकिया का काम दे रहे थे। घर में और कोई सामान नहीं था। पास में एक जसता की थाली और कोने में मिट्टी के दो घड़े पड़े थे। यही थी उस कुटुम्ब की सम्पत्ति!

भुलई की माँ आँखें बन्द किये चारपाई पर पड़ी थी। पाँवों की आहट पाकर एक बार उसने द्वार की ओर देखा। उसके मुँह से दुःख-

भरी धीमी आवाज़ निकल पड़ी। उसने आँखें बन्द कर ली। भुलई चारपाई के पास जाकर खड़ा हो गया।

"माँ कैसी तबियत है ?" उसने पूछा।

"अच्छी हूँ बेटा। आज तो बहुत जल्दी चले आये बेटा ! मजूरी कहीं नहीं मिली क्या ?"

भुलई चुप था। उसने माँ को उत्तर नहीं दिया। परन्तु उसकी आँखों में आँसू भर आये थे। दुखनी चुपचाप खड़ी कभी माँ की तरफ़ और कभी भाई की तरफ़ देख रही थी।

भुलई नौकरी की तलाश में रोज़ बरोज़ मारा-मारा फिरता था। वह रोज़ सुबह उठ कर शहर में चक्कर लगाता—जहाँ कहीं नौकरी क पता चलता, वहाँ दौड़-धूप कर पता लगाता, परन्तु उसे मायूस हो कर वापस आना पड़ता था। कभी-कभी उसे दो चार रोज़ की मजूरी मिल जाती थी—बस यही उसकी जीविका का आधार था। भूखे-दुःखे वह गुज़ारा करता था। इसी तरह वह दिन भर शहर की खाक छानने के बाद शाम को घर आता था। भुलई के बदन पर नीमन कपड़ा भी नहीं था। फटी कमीज़ और फटी मैली धोती थी। उसकी माँ और बहिन की भी वही हालत थी। वह अन्न के लिये तड़प रही थीं, कपड़ा भी अंग ढाँकने को बाक़ी नहीं रहा था। भुलई कुछ देर तक माता की चारपाई के पास खड़ा रहा। उसका चेहरा मायूस और उदास था। वह विह्वल-सा हो चारपाई पर बैठ गया और उसकी आँखों से आँसू टपकने लगे।

"क्या हुआ बेटा ? तुम रोते हो !"

"नहीं, माँ।"

भुलई आँसू पोंछ रहा था। दुखनी की भी आँखें भर आईं थीं।

भुलई की माँ कँहरती हुई चारपाई पर उठ बैठी। उसने अपना हाथ भुलई के सर पर रख दिया। उसकी माँ का हाथ, बुखार की गर्मी से जल रहा था।

"तुम लेट जाओ माँ, बुखार बहुत तेज चढ़ा है।"

"ज़रा पानी पिला दो बेटा"—कहती हुई उसकी माता चारपाई पर लेट गई। भुलई ने मटके से पानी ढाल कर उसे पिला दिया।

भुलई घर से बाहर निकला। दुखनी एक तरफ़ कोने में बैठी सिसक रही थी।

"क्यों दुखनी! तू काहे को रोती है? दिन हमेशा एक-सा नहीं रहता। घवड़ाओ मत बहिन कभी तो हमारे भी अच्छे दिन आयेंगे। जा देख तो घर में कुछ खाने को है?"

दुखनी चुप हो गई। उसका सिसकना बन्द हो गया। उसने भाई की तरफ़ आँखें उठा कर देखा। उसकी आँखें मानो चारो तरफ़ दौड़ रही थीं। भुलई समझ गया, खाना नहीं पका, और पकता कहाँ से घर में तो अन्न के नाम एक दाना भी नहीं था।

"अच्छा एक गिलास पानी ला।"

दुखनी का दिल फटा जा रहा था। कल ही से भुलई ने कुछ नहीं खाया था। एक रोटी का टुकड़ा परसों का बचा पड़ा था, उसे भी दुखनी को खिला दिया था। और वह खुद पानी ही पीकर रह गया था। दिन भर मारा-मारा फिरना और फिर पेट में एक दाना अन्न नहीं! कैसे जिन्दा रहेगा? दुखनी ने एक गिलास पानी भुलई को दे दिया। भुलई पानी का गिलास लिये बैठा था। न जाने क्या-क्या वह सोच रहा था। दुखनी अब सयानी हो गई थी। घर में खाने को अन्न नहीं और उसके विवाह की चिन्ता! भुलई की आँखों के सामने अँधेरा छा गया था। उसकी माता बुखार से बहुत तंग थी। कोई किस्म की दवा भी उसे मयस्सर नहीं होती थी। भुलई से पानी नहीं पीया गया और उसने गिलास भरा पानी जमीन पर रख दिया। उसका चेहरा एकदम घबड़ाया हुआ और उदास था। वह घर के बाहर निकला। एक दफ़े इधर-उधर देखा, शायद दुखनी को ही देखता हो। दुखनी वहाँ पर नहीं थी। वह फिर घर में चला गया। और एक तरफ़ जमीन ही पर लेट गया। वह लेटे-लेटे कुछ सोच रहा था। बाद में उसकी आँखों को पलकों ने ढँक लिया।

दुखनी पास के ऊँचे महल वाले सेठ घुनघुनमल की दुकान पर खड़ी थी।

घुनघुनमल—"क्या चाहती है ?"

"सेठजी मैं गरीब हूँ, दुःखी हूँ। दया करके एक पैसा मुझे दे दो। बहुत पुण्य होगा। सेठजी तुम्हारे धन की बरकत हो। एक पैसा दे दो।"

घुनघुन सेठ शहर के एक बड़े रईस थे। उनके कई एक मकान भाड़े पर चल रहे थे। दिहातों में चालीस हज़ार बीघे ज़मीन की ज़मीन्दारी थी। वह मकान जिसमें उनकी दुकान थी नौकर-चाकर काम करते, सौदा बेचते थे। कभी-कभी घुनघुनमल भी गद्दी पर मसनद के सहारे बैठ जाते थे।

दुखनी घर से निकली भीख माँगने के लिये। वह भाई को कुछ न कुछ खाना खिलायेगी। तीन दिन हो गये थे उसे अन्न का एक दाना भी मयस्सर नहीं हुआ था। दुखनी कई एक दरवाजे खटखटा आई लेकिन सब जगह एक ही सी फटकार मिली, "चल दूर हो, भीख माँगते शर्म नहीं आती। इठलाती फिरती है। कहीं किसी मुचण्ड को देख।"

दुखनी शर्म से गड़ जाती। उसकी आँखों से आँसू बह चलते। परन्तु उसका भाई भूखा था.........उसके खाने के लिये कुछ न कुछ ज़रूर ले जायगी।

घुनघुन सेठ के बँगले पर गई। घुनघुन सेठ कुर्सी लगाये बैठे थे। बग़ल में पानदान रक्खा था। सेठ जी फ़रसी से धुवाँ निकाल रहे थे। एक महाशय और बैठे हुये पानदान खोल पान निकाल कर खा रहे थे। पीछे दीवार पर भगवान का चित्र लगा था। सेठ घुनघुनमल और बैठे हुये महाशय खद्दर पहिने हुये थे। महाशय ने मुस्कराते हुये घुनघुन सेठ से कहा—"देखिए मैले में सोने की कहावत ठीक है न। छोकड़ी कितनी सुन्दर है।"

क्यों री ! तेरे और कोई नहीं है ?

"है सेठ जी, एक बड़ा भाई और एक बुढ़िया मा है।"

"फिर तू भीख क्यों माँगती है ? क्या वे लोग तेरे को खाना नहीं देते ?" कुछ देर रुक कर फिर बोले, "काम करेगी ? ऊपर आ जा।"

दुखनी ऊपर चढ़ गई। उसे आशा थी कि कुछ मिल जायगा। सेठ जी खद्दरधारी हैं। देशभगत और दयालु मालूम होते हैं।

"बैठ जा, बैठ जा, अच्छा बता तू कौन जात की लड़की है ?"

"मैं कुरमी की लड़की हूँ सेठ जी।"

"कुरमी की लड़की है ?" घुनघुन सेठ बोल उठे। दूसरे महाशय जिनका नाम रामस्नेही था, और जो अभी तक दुखनी से बात कर रहे थे कुछ देर तक कएटक दुखनी की ओर देखते रहे। फिर मुस्कराते हुये बोले—

"अरे कुरमी का लड़का मैं भी हूँ।"

"सेठ जी कुछ दिला दो पुण्य होगा। मेरी माता घर में बीमार पड़ी है, वह अकेली होगी।"

सेठ घुनघुनमल उठ कर कमरे के अन्दर गये। दुखनी ने सोचा कि सेठ जी पैसा लाकर देंगे। भाई के लिये बाजार से कुछ खाने को ले चलेगी, उसकी आँख दरवाज़े की तरफ़ लगी थी—शायद सेठ जी पैसा लाने गये हैं। कुछ देर के बाद घुनघुनमल कमरे के दरवाज़े के सामने आए। उन्होंने अँगुली के इशारे से दुखनी को कमरे के द्वार पर बुलाया !

"देख, मैं इस तरह किसी भिखमंगे को भीख नहीं देता ! हाँ, अगर तू मेरे घर का कुछ काम कर दे तो तुझे मजूरी दे सकता हूँ, समझी कि नहीं ?"

"क्या काम करना होगा सेठ जी ?"

"यह कमरा और पीछे वाले में झाड़ू लगा के साफ़ कर दे, तुझको चार आना पैसा अभी मिलेगा।"

"चार आने पैसे ! सेठ जी मैं अभी साफ़ कर देती हूँ। मुझे झाड़ू बता दीजिये कहाँ है !"

दुखनी की खुशी का वारापार नहीं था। वह सोच रही थी कि

भुलई भैय्या तीन दिन से भूखा है, कुछ खाया नहीं है। उसे कुछ ले जाकर खिलाऊँगी।

"सेठ जी झाड़ू बता दो मैं अभी साफ़ कर देती हूँ।"

"देख, उस अन्दर वाले कमरे में झाड़ू है, जा ले ले।"

दुखनी अन्दर वाले कमरे में झाड़ू लेने गई और घुनघुनमल अपने मित्र रामस्नेही के पास आकर बैठ गये।

"कहो दोस्त, आज फिर······।"

"नहीं, नहीं, अभी परकने दो, तुम भी कैसे आदमी हो यार !"

"हाँ, पर कहीं ऐसा न हो कि फँसी हुई बुलबुल हाँथ से निकल जाय ?"

"घुनघुनमल तुम तो पूरे बौड़म हो। इसकी बातचीत नहीं देखते, यह तो दौड़ी आएगी रोज़—इसका चाल-चलन भी तो ख़राब दिख रहा है।"

दुखनी ने कमरों को अच्छी तरह साफ़ कर दिया। घुनघुनमल दूसरे कमरे में जाकर अलमारी से पैसे निकाल कर दुखनी के तरफ़ इशारा करते हुये बोले।

"आ, ले ये पैसे ले जा।"

दुखनी ख़ुशी से जल्द कमरे में पहुँच गई। सेठजी ने उसे पैसे देने के लिये हाथ बढ़ाया। दुखनी ज्यों ही पास में गई और पैसा लेना चाहती थी कि घुनघुनमल ने उसका हाथ पकड़ अपनी गोद में ले लिया और उसके स्तन पर हाथ चला दिया······और बाद में चार आने पैसे देकर छोड़ दिया।

दुखनी की सारी ख़ुशी जाती रही, उसके चेहरे की रौनक़ जाती रही, उसका मुँह उतर गया। वह कमरे से बाहर हुई, बरामदे से उतर कर सड़क पर चली गई।

घुनघुन मल कह रहे थे—

"कल आकर फिर साफ़ कर जाना।"

दुखनी का चेहरा सफ़ेद हो गया था। उसने बाज़ार से भाई के

लिये कुछ खरीदा नहीं। उसी तरह हाथ में पैसे लिये वह घर पहुँची। उसका मुँह सूखा हुआ और उदास था। वह घर जाकर एक किनारे चुपचाप बैठ गई। रह-रह कर वह लम्बी साँस खींचती थी। आँखों से आँसू के बूँद टपक रहे थे। और वह सिसक रही थी। भुलई बाहर गया था। उसी वक्त मकान मालिक तगादा करने आया।

"अरे भुलई, ओ भुलय्या, घर में कोई है या सभी मर गये ?"

दुखनी घर के अन्दर से ही बोली—"भैय्या घर पर नहीं हैं।"

"बड़ी परदे वाली हो गई ! घर से बाहर होकर नहीं बोलती !"

दुखनी घर से बाहर निकल कर दरवाज़े पर गई।

"देख री छोकरी, तीन महीने का भाड़ा चढ़ गया है। अगर अब भाड़ा नहीं मिलेगा तो खैर (कुशल) नहीं होगी।"

"भैय्या नहीं है लाला जी, आवेंगे तब कह दूँगी।"

"भैय्या आवेंगे तो कह दूँगी ! छोड़ दे मेरा मकान। चल बाहर हो जा।"

"अच्छा लाला जी, मकान छोड़ दूँगी, भैय्या को आने दो !"

"किराए के डर से बेईमान घर में छिपा है—बहादुर सिंह अन्दर जाकर देखो तो। अगर हो तो पकड़ लाओ साले को। नहीं तो सब सामान बाहर फेंक कर घर में ताला लगा दो।"

बहादुरसिंह दुखनी को धक्का देता हुआ घर के अन्दर घुस गया।

× × ×

भुलई बगैर अन्न-पानी के शहर में चक्कर काट रहा था, उसे कहीं मजूरी नहीं मिली थी। घर वापस आने का समय हो चुका था। वह लौटने ही वाला था कि एक बाबू जी ने पुकारा।

"क्यों रे, यह सामान ले चलेगा ? थोड़ी दूर चलना है, पास वाले बड़े बँगले में।" भुलई ने कहा, "कितने पैसे मिलेंगे बाबू जी ?"

बाबू जी ने कहा—"अबे, कितने पैसे मिलेंगे ? क्या तुझे खजाना दिया जायगा ? जो मजूरी मुनासिब होगी वह मिल जायगी। चल, जल्दी कर, अगर तुझे चलना है तो ?"

भुलई ने सोचा चलो कुछ मिल ही जायगा। दुखनी के लिये कुछ बाज़ार से खाने के लिये लेते चलेंगे। वह सामान उठा कर अपने सर पर रख कर बाबू जी के पीछे-पीछे चल दिया।

उनका नाम बाबू धर्मदेव था। वे शहर के अच्छे घराने के एक रईस थे। उनके मित्र बाग़ में आने वाले थे। उन्हीं को टी-पार्टी देने के लिये धर्मदेव जी ख़ुशी से फूले नहीं समाते थे। इसीलिये धर्मदेव जी ख़ुद बाज़ार करते फिरते थे।

भुलई सामान लिये बाग़ में पहुँचा। बाग़ ख़ूब सजा हुआ था। फूल के गमलों की भरमार थी। जगह बजगह मेज़ों पर हर किस्म के सुन्दर फल सजाये गये थे। बेचारे भुलई के मुँह में पानी भर आया। कुछ अरदली वग़ैरह क़ायदे से खड़े थे। बाबू धर्मदेव ने एक नौकर से भुलई के सिर से सामान उतारने को कहा, और सामान उतार लिया गया।

भुलई, "बाबू जी पैसे मिल जाते तो बहुत अच्छा होता। बहुत दूर जाना है।"

बाबू धर्मदेव, "पैसे के बच्चे। घोड़े पर चढ़ कर आया है! ठहर, अभी मिलता है।" बाबू धर्मदेव फटकार बता कर एक तरफ़ चले गये। भुलई चुपचाप खड़ा रह गया। एक घण्टे से ज़्यादा वक़्त हो गया। मगर बाबू धर्मदेव का पता नहीं चला। बेचारा भुलई परेशान था। वह जब किसी से मजूरी के लिये कहता तो साफ़ जवाब मिल जाता—"मैं नहीं जानता।"

भुलई परेशान था। बड़े लोगों की बात, वह कर ही क्या सकता था? अगर ज़रा भी गड़बड़ करता तो उसकी अच्छी तरह से मरम्मत होती। बेचारा चुपचाप खड़ा था। पास में मेज़ सजें हुये थे। उस पर सुन्दर और अच्छी से अच्छी फल-मिठाइयाँ रखी थीं। भुलई की निगाह मेजों पर सजी चीज़ों पर थी। वह तीन दिन का भूखा था। उसकी अतड़ियाँ कलबला रही थीं। भूख की दशा! और खाने की सुन्दर चीज़ें आँख से सामने—नज़दीक में पड़ी हों! भुलई तनमना सा उठा।

उसने मज़दूरी की थी। वह दो घण्टे से खड़ा था मजूरी के लिये। वह सोचता और कहता था, "मेहनत करा के बड़े लोग दो पैसा देने में आना कानी करते हैं, हाय राम !"

वह सोचता था वह कोई गुलाम नहीं। वह कोई भिखमंगा नहीं। उसने मेहनत की थी। उसका हक़ मिलना चाहिये !

मेज़ों के पास एक-दो नौकर खड़े थे। थोड़ी देर में जब वह भी काम से चले गये तो भुलई अकेला रह गया। वह भूख से तड़प रहा था; अच्छे-अच्छे फल और मिठाइयाँ सामने पड़ी थीं।

भुलई ने नज़र उठा कर देखा कोई नहीं था। उसको मजूरी मिलनी चाहिये। और वह आगे बढ़ा। एक बार नज़र फिर दौड़ाई, कोई सामने नहीं था। उसने फुर्ती से चार दस केले, अनार दाने और कुछ मिठाइयाँ उठा कर धोती की पेंच में बाँध लिये। इतने में पीछे से किसी ने उसकी गर्दन पकड़ी।

"साला, हरामज़ादा, चोरी करने को खड़ा था। ठहर जा अभी पुलिस के हवाले करके तुझे जेल भेजता हूँ।"

बाबू धर्मदेव इतना ही कह पाये थे कि भुलई ने झटका देकर गला छुड़ाया और घूम कर, चार तमाचे बाबू धर्मदेव के दाहिने गाल में जमा कर खड़ा हो गया।

भुलई मतवाला, पागल-सा हो गया था।

"हाँ मैं चोरी करने के लिये खड़ा था। और तुमने जब तीन दिन के भूखे एक ग़रीब से मजूरी करा कर उसे मजूरी नहीं दी तो चोरी नहीं की ?"

बाबू धर्मदेव के हवास गुम हो गये। खड़े-खड़े गाल सुहराने लगे। हिम्मत नहीं हुई कि फिर छेड़ें।

इतने में दो-एक नौकर और आ गये। अब बाबू धर्मदेव को जोश चढ़ा। आँखें लाल हो गई। कड़क कर बोल उठे, "पकड़ो साले को, चोर है।"

भुलई अब तक होश में आ गया था। उसने सचमुच चोरी की थी। वह सोच रहा था पुलिस पकड़ कर जेल में डाल देगी। बीमार

बुढ़िया माँ और दुःखनी का क्या होगा ? उसका सर चक्कर खा उठा। आँखों के सामने पल भर के लिये अँधेरा छा गया। लोग उसकी ओर पकड़ने को आगे बढ़े। बगीचे में काफ़ी हो-हल्ला मचा था।

पहिले तो ऐसा मालूम हुआ कि भुलई को हिलने की भी ताकत नहीं। लेकिन एकाएक वह भाग चला। बाग़ के चारों तरफ़ चहार-दीवारी थी। भुलई एक ही छलाँग में उसके ऊपर चढ़ गया। लोगों के दीवार के पास पहुँचते-पहुँचते वह सड़क पर भागता नज़र आया। दो एक पुलिस वाले भी दीवार के पास खड़े थे। पूँछ-ताछ शुरू हो गई। एक सिपाही कहता, "हमारे रहते हुये भी हरामज़ादे ने इतनी हिम्मत की !" दूसरा कहता, बाबू धर्मदेव, आपके मुँह पर दाहिने गाल में चोट नज़र आ रही है। क्या उसने हमला कर दिया था ?" तीसरा पुलिस वाला कहने लगा, "बाबू साहेब आप के गाल में काले दाग़ पड़ गये हैं, जल्दी दवा कराइये। आप घबड़ाइये नहीं। साला भाग कर कहाँ जायगा ?"

"अजी क्या कहते हैं ? चोर और फिर हमारे ऊपर हमला करता, अजी मैंने ही तो उस पाजी को पकड़ा था। पर क्या करें जल्दी में एक पेड़ से टकरा गया और वह हरामज़ादा मेरे हाथों से निकल गया।"

बाबू धर्मदेव अपने गाल को सुहरा रहे थे जिस पर भुलई ने चतप सीधे किये थे। काला दाग़ ऐसा था जैसे गाल में खून जम गया हो। कुछ सूजन भी आ गई थी। लेकिन बाबू धर्मदेव हिम्मती ज्वान थे। उसे गाली देते जा रहे थे। भुलई के घर के पास धर्मदेव का एक अर्दली रहता था। उसने भुलई को पहचान लिया था।

"मालिक, वह तो भुलय्या था। हमारे पास ही तो उसका घर है।"

"क्या कहा भुलुवा, तू उसे पहचानता है ?" कान्स्टेबुलों की ओर देखकर, "इसके साथ जाओ और उस हरामजादे को पकड़ लाओ। ज़मीदार अपनी मोछों पर ताव दे रहा था मानों उसने शेर का शिकार मारा हो।

बाबू धर्मदेव बोल उठे। ज़रा होशियारी से जाना। कहीं साला हाथ से निकल न जाय।

सिपाही कहने लगा—"अजी साहेब क्या बातें कर रहे हैं। अरे साले को पकड़ कर लाऊँगा।"

× × ×

दुखनी कह रही थी, "लाला जी बीमार बुढ़िया माँ की तरफ ख्याल करो। देखो कितनी बीमार है। बुखार है लाला जी। भैय्या को आने दो लाला जी......"

एक बएक दुखनी की निगाह चारपाई पर पड़ी, अपनी माता पर पड़ी। वह ठगमारी सी हो गई। उसकी माता की आँखें डरावनी और खुली थी और आँख की पुतलियाँ उलटी हुई थीं। दुखनी दौड़ कर चारपाई के पास गई। माता के बदन पर हाथ रखा—बदन ठण्ढा था। वह चिल्ला कर माता की छाती से लिपट गई। उसकी मुट्ठी से चार आने पैसे ज़मीन पर गिर पड़े। बहादुर सिंह ने चुपके से पैसे उठा कर जेब में रख लिये।

भुलई घर में घुसा ही था कि सामने बहादुरसिंह पर उसकी नजर पड़ी। उसकी अजीब हालत थी। वह हाँफ रहा था, उसके चेहरे पर अजीब भाव थे। मकान मालिक भी उसीके पास खड़ा था। भुलई को देखते ही उसके तेवर चढ़ गये।

मकान मालिक—"क्यों बे मकान का भाड़ा देने के डर से भागा-भागा फिरता है। बदमाश, लुच्चा कहीं का, अभी भाड़ा चुकता कर दे और मकान खाली कर दे। तीन माह का भाड़ा चढ़ गया और एक पैसा भी नहीं दिया।" भुलई ने घर में चारों तरफ़ आँखें घुमा कर देखा। दुखनी माता की छाती से लिपटी हुई पड़ी थी। बातें सुन कर एक दफ़ा उसने मूड़ी हिलाई। सामने भुलई खड़ा था। वह फिर चिल्ला उठी, "भैय्या माँ मर गई!"

फिर वह माता की चारपाई के पास बैठ ज़ार-ज़ार रोने लगी। भुलई माँ की चारपाई के पास बढ़ा। वह उसकी तरफ़ एकदम देखता रहा। उसका दिल-दिमाग़ सफ़ेद हो गया। वह भाव-शून्य और शान्त खड़ा रहा।

"लाला जी आज ही मकान खाली कर दूँगा।" बमककर भुलई बोला।

"खाली तो कर देगा लेकिन तीन माह का बाक़ी भाड़ा तो दे।"

"भाड़ा देने के लिये मेरे पास रुपया पैसा नहीं है।"

"अभी दो हाथ कस के पड़ें तो रुपया उगल दे। सीधी तरह तो तू देगा नहीं।

"लाला जी हमारी माँ मरी पड़ी है। आप लोगों को दया भी नहीं लगती। कुछ मनुष्यपना है कि नहीं। मेरे पास तो माँ के क़फ़न के लिये भी पैसे नहीं है। लाला जी ने कहा, "बहादुरसिंह यह बदमाश है। माँ इसकी मर गई तो क्या हम भाड़ा छोड़ देंगे ? अबे साले, तेरी माँ मरे या जिये मुझे क्या ? मैं क्या लक्खू सेठ हूँ ! तीन महीने का किराया नहीं दिया और हरामी बातें बनाता है। मारो चार लात साले के, पकड़ ले चलो कोतवाली।"

भुलई ने कहा—"खबरदार ! आगे बढ़े तो याद रक्खो मसाला ठण्ढा कर दूँगा। भुलई की आँखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं। वह क्रोध से काँप रहा था। उसकी शक्ल पागलों जैसे हो रही थी।"

एकाएक दो सिपाही के साथ जमादार पहुँच गया। सभी घबड़ा उठे। मुलुवा भी साथ था। उसने कहा—

"यही है हजूर, इसीका नाम भुलई है।"

जमादार ने कहा "पकड़ो साले चोर को।"

दो सिपाहियों ने भुलई को पकड़ उसके हाथों में हथकड़ियाँ डाल दीं।

दुखनी चुपचाप मरी हुई माता की लाश के पास बैठी थी। उसकी समझ में कुछ नहीं आता था। वह उठ कर भुलई के पास चली गई। उसकी आँखों से आँसू के बूँद ज़मीन पर टपक रहे थे।

जमादार ने भुलई के कमर में हाथ लगाया तो केले, मिठाइयाँ और अनारदाने ज़मीन पर गिर पड़े।

"साला बड़े लोगों के यहाँ मजूरी के बहाने घुसकर चोरी करता है। ले चलो इसे थाने में।" जमादार ने डाँटकर कहा।

दुखनी से नहीं रहा गया। वह आगे बढ़ी और रोकर कहने लगी, "भैय्या तूने यह क्या किया?"

भुलई ने नज़र उठाई। ओह! उसकी आँखों में कितना दर्द था। कितना दुख था और उसकी हालत कितनी गिर गई थी! मुस्कराने की चेष्टा करते हुये उसने कहा—"कुछ नहीं दुखनी।" फिर वह चुप रह गया।

जमादार, "ले चलो हरामज़ादे को। जानता नहीं था कि चोरी का वदला जेल है!"

दुखनी का हृदय फटा जा रहा था।

दुखनी—"जमादार, इस ग़रीब पर दया करो। मेरी माँ मर गई। इस पापी संसार में मेरा कोई नहीं है। भैय्या चोर नहीं हैं। वह कभी चोरी नहीं कर सकते।"

जमादार—"चुप रह, बदमाश की जनी। छिनालापन दिखलाती है—भैय्या चोर नहीं है? फिर केले, मिठाइयाँ और अनारदाने मेरे कमर से गिरे थे। ले चलो जी, अब चाय-पार्टी का भी वक्त हो गया है।"

दुखनी फूट-फूट कर रो रही थी। तड़प रही थी। उसकी दुनियाँ जल रही थी।

वे लोग भुलई को बाहर ले आये। पीछे-पीछे सभी बाहर आये। दुखनी भी बिलखती हुई बाहर आई।

दुखनी, "भैय्या मेरा क्या होगा? भैय्या, भैय्या, मेरी माँ भी चल बसी। तुम भी जेल जा रहे हो। बोलो भैय्या मेरा क्या होगा?"

भुलई एकाएक जोर से हँस पड़ा।

पुलिस वाले उसे घसीटते हुये ले चले। दुखनी ठगमारी-सी खड़ी रह गई।

———

२

धर्म नाश

कल्लू अभी १० वर्ष का लड़का था। उसके माता-पिता उसको और उसके बूढ़े बाबा को छोड़ कूच कर गये। घर में इन दोनों असहाय जीवों की नैय्या पार लगाने वाला कोई नहीं था। बूढ़े को जब कुटुम्ब वालों की याद आती तो कल्लू को देखकर संतोष कर लेता। मगर फिर भी उसे कल्लू के लिये फिक्र थी क्योंकि वह कमज़ोर और कम उमर का था। उसमें मेहनत करने की ताकत नहीं थी। घर में कोई ऐसी पूँजी नहीं थी जिससे पाँच-सात दिन गुज़र चलती।

कल्लू के पिता ने बम्बई के जहाज़ गोदी में काम करके कुछ पैसा जमा किया था। लेकिन वह पैसा उसकी बीमारी में खर्च हो गया था। अब सब कुछ उस ग़रीब बूढ़े पर आ बनी। उसे अपनी मेहनत का सहारा था। वह गाँव के लोगों की भेड़-बकरियाँ चरा कर कल्लू और अपना पेट पालता था।

मुहल्ले में इन दो प्राणियों की हालत दयनीय थी। वैसे तो मुहल्ला ग़रीबों का था। हर कोई तकलीफ़ से गुज़र करता था। कोई किसी को किस बिरते पर मदद करता। गली के सामने शहर के प्रसिद्ध रईस बाबू राजकुमारसिंह का एक देवालय था। पंडित मनहरण पाण्डे देवालय के पुजारी थे और दिन में दो दफ़े घण्टा-शंख बजा कर ठाकुर जी की आरती करते थे।

बूढ़े की मुसीबत के ५ वर्ष बीत चुके थे। कल्लू अब १५ वर्ष का था मगर वह कमज़ोर था। मेहनत का कोई काम करना उसके मान की बात नहीं थी। लेकिन बूढ़े बाबा की मुसीबत देखकर उसे बरदाश्त नहीं होता था। बूढ़े को भेड़-बकरियाँ चराते देखकर उसे दु:ख होता

था क्योंकि दिन भर फिरना पड़ता था। और मजूरी इतनी भी नहीं मिलती थी कि दोनों का गुजारा हो सके। कल्लू इस फिक्र में था कि कहीं नौकरी मिल जाय, रोजी का ठिकाना हो जाय तो बूढ़े को काम से छुट्टी दे दूँ। बेचारे ने इधर-उधर गली-कूचे की खाक छानी, शहर में पचासों चक्कर लगाये। लेकिन सब फिरना बेकार था। उसे कहीं भी नौकरी नहीं मिली। आखिर उसने सब्जी-मण्डी में मजूरी करने का फ़ैसला किया और एक टोकरी लेकर मण्डी में जाकर खड़ा हुआ। उसकी आँखें सब्जी खरीदने वाले बाबुओं की तरफ़ लगी थीं। शायद कोई बाबू उससे अपनी सब्जी इत्यादि सामान उठवा ले और चार-छः पैसे मिल जायँ! बड़ी मुश्किल से एक बाबू जी एक आने पैसे पर बातचीत करके सब्जी उसके सर पर लदा कर साथ चल दिये। थोड़ी दूर चलने पर उसकी गरदन मारे गरुवाई के टेढ़ी हुई जा रही थी। लेकिन कल्लू ने बोझा नहीं गिराया। उसकी यह पहिली मजूरी थी। बेचारा अभी चौरस्ता भी नहीं पार कर पाया था कि सामने से एक मोटर चली गई। बहुत अच्छा हुआ कि कल्लू मोटर के नीचे नहीं पड़ा। बच गया। लेकिन उसे मोटर का धक्का लग गया। सर पर से भरी टोकरी अलग गिरी और वह अलग गिरा। उसके बदन से ख़ून बह रहा था। वह बेहोश चौरस्ते पर पड़ा था। आदमियों की भीड़ लगी थी, लेकिन किसी ने उसे किसी किस्म की मदद नहीं की।

कामरेड नूरे गाड़ी यूनियन का सरदार था। वह अभी गाड़ी जोत कर घर से चला ही था कि चौरस्ते पर भीड़ देख गाड़ी सड़क के किनारे खोल कर वह भीड़ के अन्दर घुस गया। उसने बेहोश कल्लू को देखा। हालाँकि कल्लू उसका कोई निजी या पहचानी नहीं था। लेकिन उसने लपक कर उसको गोद में उठा लिया। कल्लू होश में आया लेकिन एक दफ़ा 'पानी' कहकर फिर बेहोश गया। कामरेड नूरे ने इधर-उधर निगाह दौड़ाई। फिर उसने कल्लू को गोद में उठा कर बाबू राजकुमार सिंह के देवालय की निचली सीढ़ी पर लिटा दिया।

पुजारी मनहरण पाण्डे मंदिर के पास खड़ा था। कामरेड नूरे ने

कहा, "पुजारी महराज, थोड़ा-सा पानी दीजिए, यह लड़का हिन्दू का है और बेचारा बेहोश पड़ा है।"

पुजारी मनहरण पाण्डे ने सोचा कि पानी देने का काम कहार का है। उन्होंने इसमें अपना अपमान समझा। दूसरे, बड़ी-बड़ी दाढ़ी वाले कामरेड नूरे को मन्दिर के नीचे खड़ा देख कर वे जल गये। और अकड़ कर बोले, "उठा, उठा, यहाँ से उठा, यह मरीज़खाना नहीं है, यह देवालय है। किसने तुझे यहाँ लिटाने को कहा, सारा मन्दिर चौपट कर डाला बेवकूफ़ ने, राधेश्याम, छी, छी"...कामरेड नूरे कल्लू की जान बचाना चाहता था। वह कल्लू को सीढ़ी पर छोड़ कर दौड़ गया और पास के नल से अँजुरी में पानी लाकर कल्लू के मुँह में छीटे देकर थोड़ा-सा पिला दिया। थोड़ी देर बाद पानी की ठण्ड की तरावट से कल्लू ने आँखें खोल दी।

पुजारी मनहरण पाण्डे ऊपर ही से तमाशा देख रहे थे। यह तमाशा देख कर वे जामे से बाहर हो गये और बिगड़ कर कामरेड नूरे को फटकारने लगे। कहने लगे, "कल्लू का धर्म नष्ट हो गया। यह मुसलमान हो गया राम, राम।"

बाद में कामरेड नूरे कल्लू को गोद में लेकर गाड़ी पर बैठा कर अस्पताल ले गये।

कामरेड नूरे ने कल्लू की ग़रीबी की हालत डाक्टर को सुनाई तो वह बग़ैर कीमत दवा देने को तैय्यार हो गया।

मरहम-पट्टी बाँध और दवा पिला कर डाक्टर साहब ने कामरेड नूरे से कहा, "इसे ले जावो, कल फिर लाना। पाँच-छः रोज में अच्छा हो जायगा, इसके बदन में थोड़ी-सी चोट आ गयी है।"

कामरेड नूरे ने कल्लू को उसके घर पहुँचाया। कल्लू की हालत देख कर बूढ़ा रोने लगा। कामरेड नूरे ने उसे समझाया कि कल्लू को ज्यादा चोट नहीं लगी है, चार दिन में अच्छा हो जायगा। बाबा, घबड़ाओ मत, जब तक तुम्हारा कल्लू अच्छा नहीं होगा, तब तक मैं रोज़ आऊँगा, और इसे अस्पताल ले जाकर दवाई दिलाऊँगा। डाक्टर

बहुत रहमदिल और नेक आदमी है। कल्लू को बग़ैर पैसे के दवाई दे रहा है।"

इस तरह एक हफ़्ते में कल्लू अच्छी तरह चलने-फिरने के क़ाबिल हो गया।

कामरेड नूरे से कल्लू की गहरी जान-पहिचान हो गयी। और वह भी कुछ दिन में बैलगाड़ी हाँकने लगा। वह उम्मीद करता था कि कुछ दिन में वह अपने तरफ़ से गाड़ी बनवायेगा।

गाड़ी हाँकने से छुट्टी पाकर, खा-पीकर कामरेड नूरे के साथ कल्लू क्लास में जाता था। इस तरह कुछ ही दिनों में कामरेड नूरे का साथी कल्लू भी बन गया।

कल्लू ने बूढ़े बाबा का भेड़-बकरियाँ चराना छुड़ा दिया और दोनों आराम से ज़िन्दगी बसर करने लगे।

लेकिन पंडित मनहरण पाण्डे का कहना है कि कल्लू मुसलमान के हाथ पानी पीने से बेधरम हो गया। बेधरम होने से अच्छा है कि आदमी प्यासों मर जाय! यह हो तो हमारे पंडितों कि विचार है कि मरते हुये इन्सान को पानी न देना अन्न का कौल है

यह हो तो हमारे समाज मे त्रुटियां हमें इन त्रुटियों को अपने समाज से ठीक कर लेना चाहिये

३

सेवा का मूल्य

पूस-माघ की घनी रात, सनसनाती हुई हवा, तीर की तरह वेध रही थी। उधर एक का घण्टा वजा। टन्, टन्, टन्! दुनिया वालों की नींद एक पहर वीत चली थी। पशु भी अपने बसेरों में नींद में मस्त थे। परन्तु अभागी ग़रीबनी बुधनी कहारिन के लिये शाम होने वाला था। उसने दुनिया के सुख-आराम को देखा ही नहीं था, किसे कहते हैं?

उसका पति सुखू कहार परदेश चला गया था। उसका कोई पत्र नहीं आया, वह क्या करता था, किसी को मालूम नहीं। उसके पास अंगुल भर भी ज़मीन न थी, न एक पूँछ गाय-बकरी की। उसकी सम्पत्ति थी फूस की मड़ैय्या, वह भी गाँव के ज़मींदार ठाकुर धरमवीरसिंह की ज़मीन में। हाँ घर में १ थाली पीतल की, १ लोहे की करछुल, १ तावा रोटी पकाने का, और काठ की १ कठौती तथा मिट्टी का एक घड़ा था। अभागी बुधनी की विपत्ति का कोई अन्त न था। उसके दो बच्चे थे। सबसे बड़ी लड़की, कुइसी, और एक लड़का सोहन था।

उसे अपनी और बच्चों की गुज़र करने के लिये वरतन माँजने-धोने, चौका-पानी करने के सिवा और कोई काम न था। सुखू के मौजूदगी में गाँव के ज़मींदार ठाकुर धरमवीरसिंह के यहाँ का काम बुधनी करती थी। ठाकुर साहब के घर में दस प्राणियों का भोजन रोज़ दोनों वक्त़ पकता था, कभी-कभी नात-वात भी आ जाते थे। सब काम बुधनी को करना पड़ता था।

हमेशा उसे एक वजे दो वजे रात को काम से छुट्टी मिलती थी। ठाकुर साहब के घर वालों के खाने-पीने के वाद उसे कुछ बचा-खुचा

थालो का जूठन मिल जाता था। उसके बच्चे भूखे ही झोपड़ी में सो जाते थे।

बुधनी छुट्टी मिलने पर अपने घर आती थी। वह सोते हुये बच्चों को कटोरी में लाई हुई जूठन जगा के खिलाती और बचे-खुचे झूठे को खुद खा के गोंदरी बिछा के बच्चों के साथ पड़ जाती थी।

उस दिन सबेरे बच्चों को सोते ही छोड़कर बुधनी ठाकुर साहब के घर गई। लेकिन कुछ देर हो गयी थी। ठाकुर साहब की माँ पारवती-बाई सबेरे ही उठ के कंठी-माला लेके भगवान का जाप कर रही थीं। बुधनी ने डरते हुये क़दम महल में रखा था कि पारवतीबाई कंठी-माला एक तरफ़ फेंक के दौड़ीं, और "भतराकाटी काम करने का यह वक्त है ? भतार परदेश भाग गया तो दूसरा भतार लिये पड़ी थी ! कहाँ थी ! क्या इसो माफ़िक काम करेगी राँड़, काम करना है ठीक से कर, नहीं तो घर छोड़ दे, दूसरी कहारिन-कहार बसा लेंगे। क्या तेरे भरोसे हैं ?" कहकर शोर मचाने लगीं।

बुधनी ने विनती की, "मालिकिन, कल रात को ३ बजे काम से फ़ुर्सत मिली थी, सो गई थी मालिकिन ! तब भी तो रोज से सिर्फ़ आधा घण्टा देर हुई है। अभी तो सूरज देवता भी नहीं निकले। मालिकिन, अब कबो देर नहीं होगी ?"

पारवतीबाई ने कहा, "तीन बजे क्या ! चार बजे पाँच बजे तक भी मौक़े पर काम करना होगा। तेरे सात दफ़े ग़र्ज़ हो तो कर, हमें कोई परवाह नहीं है। लेकिन ख्याल रख बुधनो, दूसरे दिन देरी हो गई तो मार के घर से निकालूँगी ! तू कौन फ़िराक़ में भूली है ! भैय्या को खबर नहीं है, अगर खबर हो जायगी तो मार-मार के चमड़ी उतार देंगे। जा जल्दी काम कर।"

बुधनी डरती हुई आगे क़दम बढ़ा के चार दरवाजे पारकर आँगन में गई ही थी कि ठाकुर साहब की बीवी ने भी चार गाली चार बातें सुनाई। बुधनी ने मूड़ो नीचे किये हुए चार बालटी पानी इनारे से भरकर झाड़ू लेकर घर-चौका साफ़ किया। फिर चौका लीपापोता और

बरतन उठा-उठा के दरवाज़े के बग़ल इनारे के पास इकट्ठा करके माँजना शुरू किया।

बुधनी की लड़की कुइसी की उम्र छ: वर्ष और सोहन की चार वर्ष थी। वे दोनों बच्चे सबेरे सोके उठे। आँखें मींजते हुये रोते से इनारे के पास माँ के पास जा बैठे।

बच्चों ने कहा, "माँ बासी दो, माँ भूख लगो है !"

बुधनी बोली, "बैठो बच्चा अभी जल्दी-जल्दी बरतन माँज-धो के रख दूँ, पानी भर दूँ, फिर घर चल के रोटी पका के खिलाती हूँ। भूखे बच्चे जूठे बरतनों में चावल के दाने खुरच के खाते जाते थे, और कहते जाते थे, "माँ भूख लगी है, माँ !"

बुधनी, "अच्छा घबड़ाओ मत बरतन माँज धो लूँ। फिर अन्दर चल के मालिकिन से कुछ खाने के लिये माँगती हूँ।"

इस तरह बुधनी बच्चों को बातों का दिलासा देते हुये दो घण्टे में बरतन माँज-धो के, खुद उठा के, बच्चों से उठवा के अन्दर रसोई घर में बरतनों को रख के मालिकिन के पास जाकर बोली—"मालिकिन, बच्चे भूखे हैं, रो रहे हैं कुछ खाने को दे देव।"

पारवतीबाई झल्ला के बोलीं, "तेरा बाप कमा के रख गया, काम कर काम, तेरे रोते हुये बच्चे मेरे किस काम आयेंगे ? क्या मेरी फूल गयाजी ले जायँगे ? काम कर काम !"

बुधनी उदास हो के ३० बालटी पानी बड़े-बड़े चार हण्डों में भर-कर, ठाकुर साहब की बीबी लक्ष्मीबाई को नहला-धुला के, उनकी साड़ी धोकर, बाद में चूल्हा जला के, खाना पकवा के, उनके घर भर को नहला-धुलाकर, खाना खिलाकर, पान का बीड़ा लगा के, मालिकिन को खिलाकर, जूठे बरतनों में से जूठा खाना इकट्ठा करके, बच्चों को अधपेट खिलाकर, अपनी झोपड़ी को चली कि मालिकिन पारवती ने कहा, "अरी ओ महरिन ! ज़रा एक बीड़ा पान और एक गिलास पानी देना।"

दिन में दो बजने का वक़्त हो चुका था। बुधनी के मुँह में एक घूँट

पानी भी नहीं गया था। डरती, काँपती हुई वह पानी का गिलास लेकर मालिकिन के पास खड़ी हो गई। पानी पीने के बाद मालिकिन पारवती-बाई बोलीं, "ज़रा मेरे पाँव दाब दे। तूने तो अभी कुछ नहीं खाया होगा बुधनी ? अच्छा ज़रा-सा दबा के अँगुली फोड़ दे, फिर जा।"

बुधनी मन ही मन आँसू बहाकर ठण्ढी साँस ले रही थी और मालिकिन के पाँव दाबने लगी। क़रीब आधा घण्टा के बाद मालिकिन ने उसे छुट्टी दी। बुधनी ज़रा-सा दूर दूसरे दरवाज़े के पास गई थी कि मालिकिन की बहू लक्ष्मीबाई ने आवाज़ दी "महरिन, ओ महरिन, ज़रा एक गिलास पानी दे के जाना ! बड़ी प्यास लगी है।"

पानी देकर वह बच्चों को लेकर अपनी झोपड़ी में पहुँची।

बच्चों को घर ही पर छोड़ के वह एक गगरी पानी भरकर घर लाई, जल्दी-जल्दी जौ, मटर, चना के मिले हुये आँटे की चार रोटी पकाकर, बच्चों को साथ लेकर, खा-पीकर, गोदरी बिछाके बच्चों को लिटा के फिर मालिकिन के घर गई।

बुधनी को साल के तीनों फ़सल में २५, २५ मन के हिसाब से बुधनी को मजूरी ६५ मन साल भर में मिलती थी। कपड़े कभी-कभी साल में कहीं एक-दो फटे जो मालिकिन के काम के क़ाबिल नहीं थे, मिल जाते थे।

बुधनी ने खैंची भर के जूठे बरतनों को माँज-धो के चौका-बरतन लगा के, पानी भरकर, लालटेन और ढेबरियाँ जला-जलाकर हर कमरों में जहाँ रोज ढेबरियाँ जलाई जाती थी, वह जला के चूल्हा जलाया। रोटी बनवाने और खिलाने में क़रीब १२ बज गये थे। मालिकिन पारबतीबाई ने कहा, "बुधनी, बरतन इसी वक़्त माँज के जाना। सबेरे भैय्या कच-हरी जायँगे ? समझी !"

बुधनी क़रीब दो बजे रात तक बरतन धो-माँज के सफा करके घर चली कि पारबतीबाई चिल्ला के बोलीं "अरी ओ बुधनी ! सुन यहाँ आ। सबेरे पाँच बजे आना, खाना पकाना है, भैया खा-पी के कचहरी जायँगे।"

इसी तरह क़रीब १८ वर्ष बुधनी को ठाकुर धरमवीरसिंह के यहाँ मजूरी करते हो गये थे।

अब कुइसी की उमर करीब १५ वर्ष की थी। अभी उसकी शादी नहीं हुई थी। बुधनी को क़रीब एक हफ़्ते से बुख़ार आ रहा था। बुधनी के एवज़ में लड़की कुइसी ही रोज़ काम करती थी।

रात को १ बज चुका था। कुइसी मालिक के घर भर को खाना खिला-पिला के घर जा रही थी, कि ठाकुर धरमवीरसिंह ने आवाज़ लगाई, "अरी कुइसी रे! यहाँ आइयो कुइसा, ज़रा अपने हाथों से ठण्ढा पानी पिलाये जाओ।"

कुइसी डरती-काँपती सोच में पड़ गई कि मालिक ने कभी किसी काम के लिये नहीं बुलाया। उनका काम तो रामू बारी ही करता है। वह जल्दी से एक गिलास पानी ले के ठाकुर साहब के पलंग के पास पहुँची। ठाकुर साहब ने एक हाथ से पानी का गिलास ले लिया, दूसरे हाथ से कुइसी का हाथ पकड़ के, झटका दे के, पलंग पर खींच लिया और कुइसी के सीने को मसलने लगे। कुइसी हाथ झटक के पलंग से उठ के भाग चली कि उन्होंने दौड़ के, उसे पकड़ के, मुँह पर हाथ रख के, कहा, "देख! अगर चिल्लाई तो कल ही माँ-बेटी को गाँव से निकाल दूँगा!"

कुइसी ने काँपती आवाज़ में कहा, "मालिक मुझे जाने दो। एक हफ़्ते से माँ बीमार पड़ी है। वह रोती होगी, मालिक जाने दो।"

ठाकुर साहब ने मद से उसकी ओर देखकर कहा, "तुम घबड़ाओ मत, कल हम दवा दिला देंगे। ये जवानी का मजा तो चखती जाओ! मुझे दुःखी बनाकर मत जाओ, कुइसा।"

"आप मालिक हैं, हम आपकी प्रजा हैं। ऐसी अनरीति की बातें मत कीजिए। मुझे जाने दीजिए, हाथ छोड़िये। माँ बीमार है। रोती होगी।" गिड़गिड़ाकर कुइसी बोली।

कुइसी हाथ छुड़ाने की चेष्टा करने लगी। वह मन में कह रही थी— "हे भगवान! इज़्ज़त तुम्हारे हाथ में है। इस पापी दुराचारी से इज़्ज़त

बचाओ हे भगवन् ! अगर दुनिया में तुम हो तो मेरी लाज इस पापी जमींदार से बचाओ। भगवान !"

कमजोर कुइसी ठाकुर धरमवीरसिंह के हाथों से नहीं बची, वह बेहोश पलंग ही पर आधा घण्टा पड़ी रही ?

कुइसी होश में आई, उठकर धीरे-धीरे चलकर अपने घर पहुँची। बुधनी पड़ी हुई थी। आज उसकी तबियत कुछ ठीक थी। लड़की को देरी से आने का सबब उसने पूछा—क्यों बेटी आज देरी कैसे हुई ?

कुइसी ने कहा—कल से मैं उसके यहाँ काम करने नहीं जाऊँगी।

"क्यों, क्या हुआ ?" बुधनी ने पूछा।

कुइसी के जबानी उसने ठाकुर धरमवीरसिंह की सारी बदमाशी की बातें सुना तो उसका कलेजा जलने लगा। वह रोने लगी। वह अपनी लड़की की बेइज़्ज़ती पर रो रही थी। उसकी दुनिया में अंधकार था। उसके आगे-पीछे कोई नहीं था। वह और बीमार पड़ गई और दो दिन में चल बसी।

आस-पास वालों ने बुधनी की लाश को नहर में गाड़ दी। कुइसी अपने छोटे भाई सोहन को साथ लेकर गाँव से भाग गई।

४

मज़दूर का दिल

शहर के एक तरफ़ कूड़ाखाना के पास उसकी छोटी-सी कोठरी थी। उसकी उमर २० साल की थी। माँ उसकी बुढ़िया, बीमार थी। वह सोचता था, "माँ बहुत बीमार है। उसके घर में खाना-कपड़ा नहीं है।" वह सोचता था, "हमी क्यों ऐसे ग़रीब हैं? क्या बात है? आखिर दिन भर मेहनत करते हैं। तब भी माँ-बेटे को पेट भर अन्न, तन भर.कपड़ा नहीं मिलता! क्यों?"

बात साफ़ है। कुछ चन्द लोग हैं। जो बग़ैर मेहनत के नाना प्रकार के सुख भोग रहे हैं। हमारा ही ऐसा हाल नहीं है उनका। तमाम मज़दूरों की यही दशा है। मज़दूर कपड़ा इत्यादि चीज़ें अपनी गाढ़ी कमाई से तैयार करता है। ग़रीब किसान क़िस्म-क़िस्म के अन्न उपजाता है। लेकिन यह दोनों वर्ग हमेशा नंगे-भूखे रहता है। दुनिया इन्हीं के पैदा की हुई चीज़ों पर क़ायम है। पर हमारे ऐसे कई करोड़ों लोग भूखे और नंगे हैं। आखिर हम ग़रीबों की हालत ऐसी क्यों है? परन्तु......

मिल का पहिला भोंगा ६ बजे का हो चुका था। वह माँ के पास बैठा यही कुछ अन्ट-सन्ट सोच रहा था।

एक ही हफ़्ता हुआ था जब उसने मजूरी और पूँजी की एक पुस्तक पढ़ा था। उस पुस्तक से उसे सोचने-समझने में काफ़ी मदद मिल चुकी थी। वह पुस्तक पढ़ने के बाद सोचता था कि ऐसी और किताबें पढ़ें। "क्योंकि पूँजीवाद, साम्राज्यवाद, फासिष्टवाद का पूरा हाल जानना निहायत ज़रूरी है? इस पूँजीवादी दुनिया को दफ़नाने के लिये मज़दूरों को शहीद होना होगा? हम मज़दूरों को अपनी जान की बाज़ी लगाते हुये अपने खून से अपने सुर्ख़ झण्डे की सुर्ख़ी और

बढ़ाना है। मेरे जैसे अभागों की जवानी भले खाक में मिल जावे परन्तु........"

वह जल्दी-जल्दी उसकिना बरतनों पर मार रहा था कि दूसरा भोगा ६॥ बजे का हो गया। कुछ देर बाद बरतन माँज-धो के माँ को आवाज़ दिया, "माँ, काम पर जा रहा हूँ!"

आगे बढ़ा तो पास के भड़भूज की लड़की कबूतरी मिल गई, "कबूतरी, देखना माँ को! मैं मिल जा रहा हूँ।" वह दौड़ता हुआ मिल का फाटक पारकर खाता में पहुँच गया। मुकादम की फटकार मिली, "बदमाश जूवाड़ी रोज़-रोज़ देरी कर के आता है।"

"मुकादम जी आज देरी हो गई। माँ बीमार है। क्या करें! यह तो आज साल भर में देरी हुई है!" वह गिड़गिड़ाया।

मुकादम ने कहा, "तुम्हारे काम पर बदली वाला लगा दिया है। आज तुम्हें काम नहीं मिलेगा। अगर तुम्हारी माँ बीमार है तो छुट्टी ले जाना था। देरी क्यों किया?"

"नहीं मुकादम जी, अब कभी देरी नहीं होगी। काम पर लगा दो।"

मुकादम ने त्योरी बदलते हुये कहा, "ज्यादा गड़बड़ किया तो साहब के सामने पेश कर दूँगा? नहीं तो सीधा रास्ता ले। माँ बीमार है, तो मैं क्या करूँ?"

वह बेचारा अपने जेब से हाज़िरी का पास ले के गेट पर क़रीब १॥ घण्टा खड़ा रहा और वापसी, छुट्टी लेने वाले मजदूरों के साथ छुट्टी ले के घर के बजाय लेनिन पुस्तकालय की तरफ़ चला गया। पुस्तकालय बन्द था वह सीधा घर आया। घर पहुँचते ही माँ ने कहा, "क्यों बेटे, आज काम नहीं किया?"

नहीं माँ, "देरी हो गई थी, मुकादम ने काम पर नहीं लगाया।"

वह जल्दी-जल्दी खिचड़ी पका के माँ को खिलाकर ख़ुद खा के, एक लोटिया पानी माँ के पास रख के, लेनिन पुस्तकालय में जा पहुँचा। पुस्तकालय खुला था। रात पाली वाला मजदूर कोई किताब जमा कर

रहा था। कोई किताब ले रहा था। उसी भीड़ में वह भी पहुँचा! उसने कहा, "कामरेड! मुझे भी किताब पढ़ने को दे दीजिए। हमारे पड़ोस में भैय्या रामसिंह एक पुस्तक ले गये थे। जिसका नाम मजूरी और पूँजी है। वह पुस्तक बहुत अच्छी है। उसमें पूँजीपति और मज़दूर की सारी बातें हैं। वह पुस्तक हम खुद खरीदेंगे तनखाह के दिन। क्या आपके पास और किताबें मजूरी और पूँजी की हैं?

कामरेड ने कहा, "हाँ साथी, पार्टी आफ़िस में बहुत किताबें हैं, तनखाह के दिन आइए, आपको किताबें मिल जायँगी। क्या आप लेनिन पुस्तकालय के मेम्बर हैं?"

उसने उत्तर दिया, "नहीं।"

कामरेड ने कहा, "साथी, एक रुपया एडवान्स जमा कर के पुस्तकालय के मेम्बर बन जाइए। क्योंकि बग़ैर मेम्बर बने पुस्तकें नहीं दी जातीं।"

उसने कहा, "कामरेड, मेरे पास बिल्कुल पैसा नहीं है। तनखाह के दिन हम मेम्बर ज़रूर बनेंगे।"

कामरेड ने कहा, "क्या आप कामरेड रामसिंह के पड़ोस में मन्ना काछी के हाता में रहते हैं?"

उसने कहा, "हाँ, हाँ, हम तो उन्हींके साथ अब तो मिटिंग में भी जाते हैं।"

कामरेड ने कहा, "अच्छा मैं आपको कामरेड रामसिंह के नाम आपके मारफ़त किताब दे देता हूँ। आपका नाम क्या है?"

"मेरा नाम, भोलासिंह है?"

कामरेड ने कहा, "साथी, दो किताबें हमारे यहाँ बहुत अच्छी आई हैं। देश के संकट की सारी बातें आपको मालूम हो जायँगी। किस तरह अन्न, कपड़े के व्यापारी चीजों को दबाकर बैठ गये और महँगी आ गई। थोड़ी-थोड़ी चीज़ें बेच रहे हैं और ज्यादा से ज्यादा मुनाफ़ा करके बंगाल को भूखों से मार रहे हैं। देश के इन गद्दारों की

सारी पोल और निकम्मी नौकरशाही की काली करतूतें उसमें आपको मालूम हो जायँगी। इस पुस्तक का नाम है, 'बंगाल का अकाल हिन्दुस्तान का काल।'

भोलासिंह पुस्तक लेकर लाल सलाम करते हुये घर गया। माँ को कुछ-कुछ बुखार चढ़ चुका था। वह अकेली घर में पड़ी थी।

भोलासिंह, "माँ कैसी तबियत है। क्या कबूतरी आई थी।"

माँ, "हाँ मेरे बच्चे, कबूतरी आई थी, बैठी-बैठी मेरा पाँव मसल रही थी, अभी पानी पिला के अपने घर गई है।"

भोलासिंह पास के कमरे में जलती हुई रोशनी के पास बैठ के पुस्तक पढ़ने लगा। क़रीब एक घण्टा पढ़ते हुआ था, कि माँ की आवाज़ उसे सुनाई दी। वह झट से उठा और घर में माँ के पास पहुँचा।

भोलासिंह, "क्या है माँ! क्यों बुलाया?"

माँ ने कहा, "सो जाओ बेटा, कल काम पर जाना है।"

भोलासिंह सो गया। सवेरा हुआ! पहिला भोंपा बजा ही था कि भोलासिंह सीधा कबूतरी के घर पहुँचा और बोला, "कबूतरी मैं काम पर जाता हूँ, माँ की देख-रेख करते रहना..."

और वह मिल की ओर चल पड़ा। दिन भर काम, कठोर परिश्रम के बाद रोटी पकाने में कितनी तकलीफ होती है! भोला सोच रहा था। माँ की बीमारी—वही माँ जिसने ईंटा-पत्थर की गिट्टी बैसाख-जेठ की दुपहरी में फोड़कर मेरा लालन-पालन किया। जिसने खुद भूखी रह-कर मुझे खिला-पिलाकर बड़ा किया वही माँ बीमार थी!

भोला का दिल ठिकाने नहीं रहता था। कभी वह किताबों की ओर ध्यान दौड़ाता, कभी माँ की बीमारी पर, कभी मिल के अन्दर की सख्तियों पर ध्यान दौड़ाता तो बेचारे के तावे की रोटी जलकर खाक हो जाती।

कबूतरी आई। उसे रहम आ गया। उसने पूछा, "क्यों रे उल्लू भड़भूजिन के हाथ की रोटी खायेगा? चल हट खटिक, अलग हो, बना दूँ।" कबूतरी चौके में बैठ गई। चूल्हा ठीक से जलाकर एक रोटी

तावे पर डाल के बोली, "क्यों, यही सोच रहा है कि मजदूर संगठन में कुछ लोग फूट डाल रहे हैं और मज़दूरों को बहका रहे हैं। मज़दूरों के लाल झण्डे के खिलाफ़ प्रचार कर रहे हैं।"

भोलासिंह, "कबूतरी, तुझे ये सब बातें कैसे मालूम हुई ?"

कबूतरी, "दादा, लाल बावटा युनियन में रोज़ शाम को जाते हैं। वह वापस आके रोज़ मुझे भी समझाते हैं।"

भोलासिंह ने कहा, "बहुत जगह दिल दौड़ता है कबूतरी, क्या करें ? महीना भर खून पसीना एक करके डाँट-डपट सह के फिर चालीस रुपया तनखाह मिलती है। पठान का दो पचीस रुपया देना है। मकान का भाड़ा तीन माह का चढ़ गया। दुकान वाले का भी खुराकी बाक़ी है। माँ-बेटे के तन पर ठीक से कपड़ा नहीं। घर में खाने के लिये कुछ रह नहीं गया। माँ की दवा भी ज़रूरी है। डाक्टर नक़द रुपया माँगता है। क्या-क्या करूँ कुछ समझ में नहीं आता।"

कबूतरी, "देखो भोला, जब तक इन बड़े-बड़े मिल-मालिकों, सेठियों का सत्यानाश नहीं होगा, तब तक हम ग़रीब मज़दूरों की हालत नहीं ठीक होने की। दादा रोज़ मज़दूर सभा का काम करते हैं, मेम्बर बनाते हैं। मज़दूर मुहल्लों में जाते हैं। मज़दूरों को संगठित कर रहे हैं। वे बड़ी लगन से मज़दूर सभा का काम कर रहे हैं। रात को कभी-कभी १२ बजे रात को आते हैं।"

भोलासिंह, "हम भी तो रोज़ जाते थे। लेकिन जब से माँ बीमार है फ़ुरसत नहीं मिलती। लेनिन पुस्तकालय से एक किताब लाया हूँ। उसमें तो बंगाल की दर्दनाक तसवीर-सी खींची हुई है। अगर कबूतरी, तू पढ़े तो तुझे भी बड़े-बड़े पेट वाले बनियों की देशघातक चालें मालूम हो जायँ। आठ रुपया मन का खरीदा हुआ चावल बनियों ने साठ रुपया मन बेचे।"

कबूतरी—"दे दो, इस किताब को पढ़कर दे जाऊँगी। लेकिन पढ़ लेने से ही तो बंगाल की भुखमरी दूर नहीं होती। उसके लिये दिलो-जान से काम करना होगा।"

कबूतरी रोटी पका के अपने घर चलने लगी तो भोलासिंह ने कहा, "कबूतरी, धुयें से तेरी आँखों से आँसू वहे हैं, आँखें तेरी अभी भी लाल हैं, हाथ-मुँह धो ले, एक रोटी खा ले तब जा।"

कबूतरी ने कहा, "क्या मेहनताना दे रहे हो !"

भोलासिंह बोला, "यह मेहनताना नहीं है प्रेम का व्यवहार है। अगर तू मेरे यहाँ नहीं खायगी, तो मैं तेरी शादी में नहीं आऊँगा, अगर आ भी गया, तो खाऊँगा नहीं !"

दोनों खिलखिला के हँस पड़े। कबूतरी आधी रोटी तोड़ के नमक के साथ खाकर अपने घर गई।

भोलासिंह ने पुकारा, "माँ, रोटी तैय्यार हो गई। ज़रा-सा खा लो माँ !"

माँ एक टुकड़ा रोटी खा के पानी पी के अपने बिस्तरे पर पड़ गई। बाद में भोलासिंह रोटी खा के बत्ती को बुझा के सो गया।

सवेरे उठकर मिल में गया, आधा घण्टा काम किया था कि मिल में हुल्लड़ हुई, चारों तरफ़ सीटियाँ बज रही थीं। मशीने हर खातों की बन्द हो गईं। सब मज़दूर बाहर आ गये। हड़ताल हो गई। हड़ताल ! शहर में हलचल मच गई। मिल में हड़ताल हो गई ! भोला-सिंह अपनी बीमार बुढ़िया माँ को कबूतरी के भरोसे छोड़ गया था।

सब हड़ताली मज़दूर मिल के आस-पास खड़े थे। नारे लगा रहे थे। P. L. Kaul

मजदूर सभा — ज़िन्दाबाद।
लाल झण्डा — ज़िन्दाबाद।
कम्यूनिस्ट पार्टी — ज़िन्दाबाद।
जगमोहन को — काम पर वापस लो।

बाद में भोलासिंह ने पता लगाया तो पता चला कि हवाघर में एक मुकादम ने एक मज़दूर को मार-पीटकर गेट के बाहर निकाल दिया। उसी वजह से हड़ताल हो गयी। भोलासिंह ने सब मज़दूरों को इकट्ठा किया। मिल कमिटी के लिये हर खाते से एक-एक आदमी चुने गये।

फिर कमिटी की मिटिंग तुरन्त करके फ़ैसला हुआ कि निकाले हुये मज़दूर जगमोहन को काम पर वापस लेने के लिये मिल कमिटी मिल मैनेजर से बातचीत करेगी। मिल अभी चालू हो जानी चाहिये। इसके बाद एक मज़दूर मिल कमिटी का मेम्बर तकरीर करने खड़ा हुआ।

"कामरेड सदर, और मज़दूर साथियो !

आज हम बहुत नाज़ुक और ख़तरनाक परिस्थिति में हड़ताल कर बैठे हैं। देश के ऊपर जापान का हमला हो रहा है। देश के मुनाफ़ाखोर बनिये अन्न, कपड़ा छिपा कर महँगा बेच रहे हैं। जिससे बंगाल के ग़रीब मज़दूर किसान जो हमारे सच्चे साथी और भाई हैं मौत के घाट उतर रहे हैं। मिलें चालू रख ज़्यादा कपड़ा पैदा करके श की नंगी-भूखी जनता की इज़्ज़त रखना ही हम मज़दूरों का फ़र्ज़ है।

इसके बाद भोलासिंह ने कहा, "मज़दूर साथियो ! आज बंगाल ही नहीं, हिन्दुस्तान के कोने-कोने में अन्न और कपड़े के संकट से ग़रीब जनता बेहाल है। चारों तरफ़ चोर बाज़ार चालू है ! निकम्मे नौकरशाह ठीक इन्तज़ाम नहीं कर रहे हैं। इस समय हम मज़दूरों की बड़ी ज़िम्मेदारी है। हमारी पार्टी देश-रक्षा का भार अपने विशाल भुजाओं पर लेकर देश का संकट दूर करने के लिये, फ़ासिज़्म से देश को बचाने के लिये, आन्दोलन कर रही है।

आज पैदावार ही एक ऐसा महत्त्वपूर्ण साधन है जिसकी मदद से भुखमरी से जनता की जान बचाई जा सकती है। हमारी पार्टी, राष्ट्रीय नेताओं की रिहाई, काँग्रेस-लीग एकता, देश में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना का नारा लगा रही है। यही एक सच्चा रास्ता है जिससे देश में राष्ट्रीय सरकार बनाई जा सकती है। साथियो ! इसलिये हमारी मिल कमिटी ने मजदूर सभा के नेतृत्व में फैसला किया है, कि आज ही से और अभी से मिलें चालू हो जानी चाहियें।"

कामरेड प्रीतमसिंह बोले, "हमारा कहना है कि ऐसे खद्दरधारी पूँजीवाद के रखवालों को जो आपस में फूट डलवाने की कोशिश कर

रहे हैं आज मुँहतोड़ जवाब दे के अपने से दूर करना है। इन दलालों के बहकावे में नहीं पड़ना है। इनकी मीठी बातों पर नहीं जाना है।"

बाद में का० सदर ने ५ मिनट में तकरीर खतम करके एलान किया, भाइयो! अब इसके बाद दुनिया भर के मज़दूरों का अंतर्राष्ट्रीय गीत होगा। सब मज़दूर खड़े हो गये तो गाना शुरू हुआ :

"उठ जाग ओ भूखे बन्दी,
अब खींचो लाल तलवार।
कब तक सहोगे भाई,
ज़ालिम का अत्याचार।
तुम्हारे रक्त से रंजित क्रन्दन,
अब दश-दिश लाया रंग।
ए सौ वर्ष के बंधन,
एक करेंगे भंग।
यह अन्तिम जंग है जिसको,
जीतेंगे हम एक साथ।
गाओ इंटर नेशनाल,
भव स्वतंत्रता का गान।
यह अंतिम जंग है जिसको,
जीतेंगे हम एक साथ।
गाओ इंटर नेशनाल,
भव स्वतंत्रता का गान!"

गाना खत्म होकर नारे लगे और जलसा समाप्त हुआ। आधा घण्टे के बाद मिल फिर चालू हो गई। मिल कमिटी के नुमाइन्दों ने एक डेपूटेशन के ज़रिये मिल मैनेजर से बातचीत की। बाद में मैनेजर ने हवाघर के मुकादम को, और निकाले हुये मज़दूर जगमोहन को तुरन्त बुलाकर, दोनों का बयान लिया। बयान मिल कमिटी के नुमाइन्दों के सामने हुआ।

बयान के बाद फ़ैसला हुआ कि जगमोहन को काम पर बहाल किया जाय और मुकादम को एक माह के लिये ससपेन्ड किया जाय।

मुकादम—"साहब" मैं ससपेन्ड नहीं होना चाहता। मेरा हिसाब दे द ।

मैनेजर—"जाओ, तुम्हारा हिसाब मिल जायगा तनखाह के दिन ले जाना।"

जगमोहन अपने काम पर गया।

भोलासिंह अपने घर गया। उसकी बुढ़िया माँ बीमार उदास पड़ी थी।

भोलासिंह, "माँ! कैसी तबियत है!"

माँ बोली, "कैसी बतावैं, बेटा! तुम बताओ, मिल की हड़ताल कैसी रही?"

भोलासिंह—"चालू हो गई माँ!"

माँ—"कल से काम पर जाओगे बेटा!"

भोलासिंह—"हाँ, माँ! कल से काम पर जायँगे! क्या कबूतरी आई थी?"

माँ—"हाँ, आई थी, दो दफ़े, अभी पानी पिला के गई है।"

भोलासिंह की माँ की तबियत अच्छी होने के बजाय दिन बदिन खराब होती गयी और एक माह के बाद उसकी बूढ़ी माँ चल बसी। साथियों ने और कबूतरी भी आकर उसकी कर्म-क्रिया की। कबूतरी भोलासिंह की अर्धांगिनी बन गई और भोलासिंह पार्टी मेम्बर बनकर नंगे सिर, नंगे पाँव, मज़दूरों के यहाँ खाकर मज़दूर सभा का काम ज़ोरों से करने लगा।

भोलासिंह और कबूतरी, पार्टी मिटिंग में ज़िला कमिटी के सामने प्रतिज्ञा ले रहे हैं:—

"मैं मज़दूर-वर्ग के सच्चे हितों की रक्षा करने तथा जनता के तमाम साम्राज्य-विरोधी और प्रजातांत्रिक आन्दोलनों में काम करने की प्रतिज्ञा करता हूँ।

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मातृभूमि की रक्षा के लिये, देश की पूरी स्वतंत्रता के लिये, जनतंत्र की स्थापना, जनता के हितों की रक्षा, और प्रत्येक नागरिक से सुखमय जीवन के लिये, मैं सदैव अपनी पूरी ताक़त से काम करूँगा।

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि साम्राज्यशाही और फाशिस्टशाही को खतम करने के लिये हर तरह के राष्ट्रीय दमन का अन्त करने के लिये, तमाम जातियों के आत्म-निर्णय के अधिकार के लिये, और अछूतों के समान अधिकारों के लिये तथा शोसलिज़्म की स्थापना के लिये मैं बराबर काम करूँगा।

इसलिए मैं दृढ़ प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं हमेशा कम्यूनिस्ट पार्टी के सिद्धान्तों पर अटल रहूँगा, उसके उद्देश्यों, और कार्य की एकता की रक्षा करूँगा, और अपनी पूरी ताक़त के साथ उसके कार्यक्रम को पूरा करने की कोशिश करूँगा।"

५

देवदर्शन

उस दिन बमभोले कैलाशपती शंकरजी के मंदिर में बड़ी भीड़ थी। शहर के अलावा देहातों से लोग लिंग की पूजा करने तथा दर्शन के लिये खचाखच थे। जिधर देखो उधर भीड़ ही भीड़ दिखाई दे रही थी। दूकानें क़िस्म-क़िस्म से सजी हुई थीं। मंदिर में बड़ी भीड़ थी। शंकरजी के मूर्त्ति के आसपास भी फूलों की ढेर लगी थी। लोग कह रहे थे आज शिवरात्रि है।

सबेरे से जिन लोगों का ताँता बँधा था, वह टूटता ही नहीं था, युवकों और सुन्दरियों के आने-जाने का एक ही रास्ता था। कुछ नवयुवक और युवतियाँ तो बड़े आनन्द से जाती थीं। धक्का लगने में उन्हें बड़ा मज़ा आता था। कोई-कोई तो अपने दिलों के अरमान भी भीड़ ही में मिटा लेते थे। फिर क्या हुआ यह तो शंकरजी का दरबार है!

सूर्य भगवान के अस्त होने का समय हो रहा था। भीड़ बढ़ती ही जाती थी। पुजारियों का तो साल भर का यह दिन था। बड़े आनन्द के साथ यात्रियों (स्त्री-पुरुष) को आशीर्वाद देते पीठों तथा मौक़े पर पेटों पर हाथ फेरते हुये दक्षिणा ले रहे थे। बेचारे क्या करते। भीड़ जो ज्यादा थी। पुजारियों ने ग़रीब यात्रियों को मंदिर में आने के लिये शाम का वक़्त रखा था। पूजा की सामग्री में पान, बेलपत्र, फूल, चावल, दूध, मेवा, कपड़ा, चाँदी और सोने का दान करने वाले धनी लोगों के लिये फाटक सबेरे से ही खुला था।

शाम को आठ बजने का समय था। आये हुये कुछ यात्री अपने-अपने घरों को चले गये थे। बाक़ी जो बचे थे वह अपने खाने-पीने में लगे थे। घोड़ागाड़ियाँ, बैलगाड़ियाँ, सजी-धजी सुन्दरियाँ मंदिर को सूना करके अपने घर चली गई थीं।

अब ८ बजे के बाद गरीबों का नम्बर आया। बहुत तो बुढ़ियाँ भी थी, जो ५, ५ कोस पैदल चल के आई थीं। वे अपनी बारी देख रही थीं। चावल अक्षत किसी के पास था तो फूल नहीं था। किसी के पास फूल था तो पैसा ही नहीं था। पुजारी कोप रहे थे। "आज साल भर का मेला है कम से कम चार पैसा तो शंकरजी को चढ़ाओ ?" यह बात हर पुजारी के मुँह से निकल रही थी। "आज का देना वर्ष भर का लेना है। दूध पूत से फूलो फलो जजिमान। तुम्हारी धन की बढ़ती हो। शंकरजी तुम्हें पुत्र दें जजिमानिन।"

चिन्नू कहार की २२ वर्ष की उमर थी। उसकी शादी हो चुकी थी। उसकी बीवी महदेइया को आये तीन वर्ष हो चुके थे। लेकिन अभी कोई बाल-बच्चा नहीं हुआ था। बेचारा चिन्नू खून की खराबी से बीमार रहता था। अभी तक वह गाँव के लोगों की सेवा-टहल करके गुजारा करता था। बीमारी और आगे बढ़ी और उसके हाथ-पाँव फूटने लगे। वह बहुत दुःखी था। उससे ज़्यादा दुःखी बेचारी महदेइया थी। वह चारों तरफ़ दौड़-धूप कर दवाई लाती। खिलाती-पिलाती, मालिश करती थी। लेकिन किसी क़िस्म का आराम नहीं हुआ।

महदेइया ने कितने देवताओं को मनौती मनायी, लौंग उनके नाम से फेर कर रखा। पर सभी निष्फल रहा।

पड़ोस की रामकली तिऊराइन विधवा थी। उन्हें देवता-पित्तर का बड़ा प्रेम था। प्रेम हो क्यों ना! ब्राह्मणी जो थी। उन्होंने महा-देइया को बताया कि आज शिवरात्रि का दिन है। बौरहवा बाबा का आज मेला है। तू वहाँ ज़रूर जा! वे बड़े मशहूर देवता हैं। उनकी कृपा होगी तो चिन्नू की कोढ़ जाती रहेगी। लेकिन सफ़ाई से जाना। देवता-पित्तर की बात है। देवी-देवता सफ़ाई से प्रसन्न रहते हैं।

महदेइया की उमर अभी १८ वर्ष की थी। वह बहुत सुन्दर और चालाक और पतिभक्त थी। गौने की साड़ी नैहर से पहिन के आई थी। वह अभी तक धराऊ रखी थी। उसने उसे निकाल के पहिन

लिया और पानफूल के खर्चे के लिये चार आना पैसा लेकर चलती बनी।

क़रीब १२ बजने का वक्त था। मंदिर का दरवाज़ा बन्द हो चुका था। आस-पास सन्नाटा-सा था। अँधेरी रात थी। वह भटकती हुई मंदिर के पास जा खड़ी हुई। मंदिर के अन्दर लालटेन जल रही थी। पेड़ों पर कहीं-कहीं फोंहर डिंगवा अपनी कँहर की आवाज़ लगा रहे थे।

महदेइया—"बाबा, बाबा! पुजारी बाबा!"

पुजारी—"कौन है! बारह बजे रात को बाबा-बाबा करती है?"

महदेइया—"पुजारी महराज मैं एक अभागिनी हूँ। दरवाज़ा खोल दीजिए।"

पुजारी महराज मंदिर का फाटक खोलकर बाहर आये।

पुजारी—"इस अँधेरी रात में हाथ पसारने से नहीं दिखाई देता। तू किस लिये यहाँ आई?"

महदेइया—"पुजारी महराज आज साल भर का त्यौहार है। पतिदेव बीमार पड़े हैं। आज के दिन बौरहवा बाबा (शंकरजी) की पूजा नहीं की।"

पुजारी—"जाओ अब यहाँ से चली जाओ, इतनी वक्त पूजा करने को नहीं मिलेगा। क्या आदमी ही सोना जानते हैं। देवता भी आराम करते हैं।"

महदेइया—"लेकिन पुजारी महराज! अगर आज पूजा नहीं करूँगी तो मेरा सरबस लुट जायगा। अब सिर्फ़ इन्हीं देवता का दरबार, दर्शन बाक़ी है। दया करो पुजारी महराज! मुझ ग़रीबनी पर दया करो।"

पुजारी—"तुम कौन जाति की स्त्री हो?"

महदेइया—"मैं कहारिन हूँ महाराज।"

पुजारी ने लालटेन उठाकर उजाला महदेइया के मुँह पर किया, देखते ही उसके दिल में पाप सवार हो गया। अच्छा, चली आ अन्दर।

पुजारी के पीछे-पीछे महदेइया मन्दिर के अन्दर घुस गई।

पुजारी ने उँगुली से इशारा किया—"जाओ लक्ष्मी-शंकरजी का पूजन कर लो।"

महदेइया रात को कहाँ फूल पाती ? चार आना पैसा जो लाई थी। वह शंकरजी के ऊपर चढ़ा दिया। और हाथ जोड़ के विनती की, हे शंकर भगवान हमारा पति अच्छा हो जावै तो अगले साल इसी दिन तुम्हारे मंदिर पर सत्यनारायण स्वामी की कथा सुनूँगी। हे शंकर भगवान ! ग़रीबों के स्वामी !......

महदेइया शंकरजी की पूजा करके बगल हटी। पुजारी सामने खड़ा था। उसने कहा, "लक्ष्मी मेरी भेट !"

महादेइया—"पुजारी बाबा चार आना पैसा मैं लाई थी। वह शंकरजी के ऊपर चढ़ा दिया। और पैसा मेरे पास नहीं है। बाबाजी ! वह भी पैसा तो आप ही को मिलेगा ?"

पुजारी—"तुम्हारे दया से बहुत पैसा मिलता है, लक्ष्मी ! आओ इधर तुम्हारा सब संकट दूर हो जायगा।"

पुजारी ने हँसते हुये महदेइया का हाथ पकड़ लिया। "लक्ष्मी, तुम जैसी सुन्दरी का दर्शन बहुत मिलता है। लेकिन कुमौक़े पर। आज बहुत अच्छे मौके से मिली हो। तुम्हारे पति अच्छे हो जायँगे घबड़ाओ मत।"

महदेइया के अंग काँपने लगे। वह समझ गई कि पुजारी को पाप सवार हो गया। वह रोती-सी बोली—

"पुजारी महराज मैं ग़रीबनी हूँ। मेरा पति बीमार है। मुझे जाने दीजिए।" और वह हाथ झटक के शंकरजी की मूर्त्ति (लिंग) पकड़ के बैठ गई। "हे शंकर भगवान मैं तुम्हारे शरण में हूँ। इस पापी पुजारी से मेरी इज्ज़त बचाओ ? हे बौरहवा बाबा ! नादिया बैल पर सवारी करने वाले, इस अधम पापी से मेरी लाज बचावो ?"

पुजारी—"देख लक्ष्मी ! सुन्दरी ! अगर शंकरजी को ख़ुश करना है, तो पहिले मुझे ख़ुश कर, तेरा पति अच्छा हो जायगा। क्यों

उसको बहूते मजा आया होगा

नाहक़ हल्ला मचाती है।" और पुजारी ने महदेइया का हाथ शंकरजी की मूर्त्ति से छुड़ा लिया।

महदेइया—"हे पशुपतीनाथ, कैलाशपती शंकर भगवान! आप इस पापी पुजारी से मेरी लाज बचाओ? हे शंकरजी सहाय लागो!"

पुजारी महदेइया को पकड़ कर मंदिर के पास रसोई घर में उठा ले गया, और वहाँ पर उसे बेइज्ज़त किया। महदेइया बेहोश हो गई।

महदेइया धीरे-धीरे होश में आई। और वहाँ से उठकर चलने लगी, कि पुजारी ने हँसते हुये कहा, "सुन्दरी परसादी ले तो जाओ।"

महदेइया ने कहा, "पापी, तुम्हारी छय हो। पत्थर के ऊपर चढ़ा हुआ परसादी उसी के ऊपर फेंक दे।"

एक बजने का समय था। रह-रह कर बिजुली चमक उठती थी। हवा बड़ी ज़ोरों से चल रही थी। पानी की झमाझम बारिश हो रही थी। वह रोती हुई अपने पती में ध्यान लगाये हुये जा रही थी! रास्ते में कहीं गिरती, कही उठती वह घर पहुँची। घर सूना था। भयानक दृश्य था। पतीजी चुप थे और महदेइया का होश-हवाश गुम।

घर में पानी भरा था। महदेइया पड़ोस में तिऊराइन से बत्ती लाई। उजाला किया। उसकी पती की आँखें उल्टी हुई थीं। चेहरा भयानक, डरावना-सा था और चिन्न चल बसे थे।

महदेइया—तड़प-सी उठी, उसका कलेजा जलने लगा। वह रोती-चिल्लाती, उसके आगे-पीछे कोई नहीं।

हाय स्वामी चल बसे! हाय प्राणनाथ मुझे छोड़कर चले गये!! तुम्हारी खातिर शंकर के पुजारी ने मेरा धर्म लूटा, मुझे बेइज्ज़त किया!

और तुम चल बसे

Lucknow
Roll No.

६

भाईचारा

कल्लू एक किसान का लड़का था। उसका बाप मर गया था। उसके बाद उसकी माँ और उसकी लुगाई रमरजिया भी मरी। उसकी एक लड़की और वह बचा था। घर वालों के मर जाने से कल्लू बहुत दुःखी रहता था। कहीं भी जाता था साथ में लड़की उदिया रहती थी।

"बापू, अब कितनी दूर है ?"

"घबड़ाओ मत बेटी, थोड़ी दूर है।"

कल्लू और उदिया दोनों कुछ देर साथ चलते रहे। चैत-बैसाख का दिन था। रास्ते की धूल जल रही थी। आँधी और लू चल रही थी।

"बापू मैं बहुत थक गई, मुझसे नहीं चल जाता। पाँव में दर्द हो रहा है।"

"अच्छा बेटी"—कहता हुआ कल्लू ने अपनी गठरी सड़क के किनारे शीशम के पेड़ के नीचे रख दी और बैठ गया। उदिया भी उसी जगह बैठ गई। उदिया की उम्र १२ साल की थी। उदिया पेड़ के पत्तों पर निगाह लगा रही थी। क्योंकि हवा बिलकुल बन्द थी। कल्लू सर नीचे किये कुछ सोच रहा था। कुछ देर बाद जरा हवा भी चलनी शुरू हुई, उदिया पेड़ के नीचे सो गई। कल्लू के संसार में कोई नहीं था। थी तो पास में सोई हुई लड़की उदिया !

उदिया अब अपने जवानी के उम्र में आ रही थी। कल्लू ने उसकी तरफ़ देखा—वह बेखबर सो रही थी। उसके बदन पर एक मैली फटी धोती थी। उसके बदन की हड्डियाँ दिखाई देती थी। सर के बाल धूल में लथरे थे। उसकी आँखें घुसी थीं। कल्लू का चेहरा उदास हो गया। आँखों से आँसू गिरने लगे। उसकी दुनिया सूनी थी। उसके जीने

का कोई ठिकाना नहीं, रहने का कोई ठिकाना नहीं। इसी शोक सागर में वह डूबता-उतराता था। वह सोचता था। एक दिन उसका भी निज का घर था। माँ-बाप और औरत थी। खेती-बारी थी। लेकिन आज ?

वह एक भिखारी है। उसकी खेती-बारी छिन गई। उसका सर्वस्व लुट गया। कहाँ जायेगा यह उसे भी नहीं मालूम। साथ में एक नौजवान लड़की है। जिसकी लाज बचाने की भी उसके पास ताक़त नहीं। कल्लू पाग़ल की तरह, दिवाना, मुरझाया-सा था। उसने उदिया की तरफ़ देखा वह सो रही थी। कल्लू दुःखी था। बैठे-बैठे अपनी रामकहानी सोच रहा था—

गाँव के ज़मींदार बाबू सोहनसिंह की गिन्ती रईसों में थी, वे एक मशहूर आदमी थे। देहातों में उनकी बड़ी इज्जत थी। वे खद्दर भी पहनते थे। तीन दफ़े कांग्रेस आन्दोलन में जेल काट चुके थे। लोग जानते थे कि बाबू सोहनसिंह बड़े त्यागी पुरुष हैं। उनकी बड़ी बड़ाई होती थी। लोग कहते थे कि सोहन बाबू किसानों की आज़ादी के लिये लड़ रहे हैं। बड़े जोशीले थे। लाउड स्पीकर के सामने सरकार को ख़ूब खरी-खरी सुनाते थे। उनकी त्याग और देशभक्ती पर शाम को गाँव के किसानों की बैठक में किस्से-कहानियाँ होती थीं। कल्लू भी तो सुनता था, अपने मालिक बाबू सोहनसिंह की त्याग और जेल की क़ुर्बानियाँ और वह फूल उठता था।

एक रोज परचा छपा। लिखा था बाबू सोहनसिंह आयेंगे। और मिटिंग होगी। गाँव के पूर्व तरफ़ मैदान में कई हज़ार किसान जमा हुये। बाबू सोहनसिंह एक मोटर गाड़ी पर आये। उनकी बड़ी इज्ज़त हुई। किसी ने गले में फूलों की हार डाली। उनका व्याख्यान हुआ। "कांग्रेस को मज़बूत करना हर किसानों का फ़र्ज है। भाइयो, मैं असेम्बली में चुन कर जाना चाहता हूँ। हमें चुनना आपका काम है। फिर आप देखेंगे कि पुलिस और ज़मींदारों की नादिरशाही कैसे चलती है ? उन्होंने कहा, "गांधीजी और जवाहरलाल का यही सन्देश है। असेम्बली में जाओ ? ग़रीबों, किसानों के हक़ों की हिफ़ाजत करो ?"

भाइयो, इसलिये मुझे वोट देना। फिर देखना हम क्या करते हैं।

दूसरे दिन वोट का दिन आया। दिहातों से ग़रीब किसानों ने अपने नेता को वोट दिया। कल्लू ने भी वोट दिया। उसके तीसरे दिन बाबू सोहनसिंह आये। गाँव में .खुशियाली मनाई गई। किसानों को मिठाइयाँ दी गई। चारों तरफ़ बाबूजी की वाह-वाह हो रही थी। कल्लू ने भी मिठाई खाया। कल्लू ने सलाम किया। वे हँसकर बोले, "देखो कल्लू अब मैं कौंसिल का मेम्बर बन गया। देखना कैसा-कैसा नया क़ानून बनाता हूँ।"

तीन महीने का दिन बीत चुका था। कल्लू गाँव के किनारे खेतों में घास छील रहा था। घर पर उदिया बैठी थी। लाल पगड़ी बाँधे सिपाही आया। सरकारी हुक्मनामा। बक़ाया का लगान। दो वर्ष का। बाबू सोहनसिंह ने नालिश की थी। कल्लू के पिता के समय का बाक़ी लगान में। सिपाही ने 'कल्लू कल्लू' आवाज़ लगाई। उदिया लाल पगड़ी देखते ही सहम गई। लेकिन जब भी हिम्मत कर बोली—"घास छीलने गये हैं।"

सिपाही ने उदिया से कहा—"लड़की जल्द बुला ला।"

उदिया वहाँ से चल कर गाँव के बाहर गई। कल्लू अरहर के खेत के पास सड़क पर हरी-हरी घासें छील रहा था। वह अपने दिल में सोच रहा था आज बहुत अच्छी घास मिली है। .ज्यादा छीलेंगे, पशु खूब खायँगे। कि उदिया पहुँची। उसने कहा, "बापू लाल पगड़ी बाँधे एक आदमी दुवारे खड़ा है। तुम्हें बुला रहा है।" कल्लू सुनते ही दंग हो गया। उसने कहा, "लाल पगड़ी वाला कैसे आया?" वह घासें छिली हुई खैचीं में भर कर घर आया। दूर ही से सिपाही को सलाम किया।

सिपाही—"कल्लू तुम्हारा नाम है! सम्मन लाया हूँ तहसील में ज़मींदार ने दावा किया है। तुम्हारे बाप के ज़िम्मे दो वर्ष का मालगुज़ारी बाक़ी है। अगर ता० २० को तहसील में रुपया जमा कर दिया तो ठीक है, नहीं तो जो तुम्हारा खेत है ज़मींदार बाबू सोहनसिंह कुड़क

(लिल्लाम) करा लेंगे। अँगूठा सम्मन पर लगा दो। और मेरा तलबाना १) दो। जल्दी करो, नहीं तो, शाम को रुकेंगे तो खाना भी देना पड़ेगा।"

कल्लू—"सिपाही साहेब रुपया तो नहीं है।"

सिपाही—"अगर रुपया नहीं देगा, तो पकड़ के तहसील में ले चलूँगा। नहीं तो रुपया ला।"

कल्लू दुखी था। उसकी दुनिया जल रही थी। गाँव में किसी से एक रुपया तौज़ा (हथुधरा) ला के सिपाही को दे दिया। सिपाही ने रुपया लेकर अपना रास्ता लिया। कल्लू के पास अब सिर्फ़ १० बीघा खेत रह गया था। उसके पास और कोई जायदाद थी नहीं, जिससे दो वर्ष की मालगुज़ारी बाप का बक़ाया अदा करता। वह बाबू सोहनसिंह के पास—रोने-गिड़गिड़ाने गया था। शायद सोहन बाबू माफ़ कर दें। और सोहन बाबू ने हाँ भरी थी।

उस दिन मैदान के जलसे में कितनी ख़ुशी थी। लोग कह रहे थे। बाबू सोहनसिंह ने कौंसिल में क़ानून बनाया था। जिस किसान के ज़िम्मा बक़ाया मालगुज़ारी है माफ़ किया गया है और जिस किसान का खेत बक़ाया मालगुज़ारी से लिल्लाम किया गया है वह वापस मिलेगा। कल्लू सोचता था। हमारी भी मालगुज़ारी माफ़ हो जायगी। उस दिन गाँव में कितनी खुशियाली थी? भोले-भाले किसान बड़े प्रसन्न थे। बाबू सोहनसिंह ने नया क़ानून बनाया है। कल्लू, बाबू सोहनसिंह की कोठी पर गया था। उसने वहाँ देखा था। सिपाहियों की भरमार और तगड़े नवजवानों की बैठक। बैठक में बाबू सोहनसिंह भी थे। कल्लू सलाम करके पीछे हट आया।

सवेरे का वक्त था। कल्लू खेत में हल चला रहा था। कुछ सिपाही और कुछ तगड़े नवजवान खेत पर गये।

सिपाही—"कल्लू से, तुम हल चलाना बन्द कर दो तुम्हारा खेत लिल्लाम हो गया। सरकार ने फ़ैसला कर दिया है। बाबू सोहनसिंह का हुक्म है।"

कल्लू—"हम हल नहीं बन्द करेंगे। खेत हमारा है। कांग्रेस ने फ़ैसला कर दिया है, कि बक़ाया मालगुज़ारी माफ़ हो गई है।" लेकिन कल्लू की कौन सुनता। उसे मार कर भगा दिया सिपाही ने। उसका खेत उसके हाथ से निकल गया। उसकी झोपड़ी लिल्लाम कराई गई। उसके बाद कल्लू का संसार में और कोई, कुछ नहीं। वह गृहहीन भिखारी हो गया।

कल्लू ग़ुस्से में तमतमा गया। ओ, हो, ! किसानों को लाभ, कौंसिल, खद्दर बाना, देशप्रेम, देशभक्ति, त्याग !

उसके बाद आया एक मैला कपड़े वाला किसान। उसने कहा "ये ज़मींदार तुम्हारे कभी मित्र नहीं होंगे। ये ज़ालिम विषैले साँप के बच्चे हैं। इन्हें जो पालता है, उसी को काटते हैं। किसानों का ख़ून इनके महलों में चमचमाता है। किसानों के ख़ून चूसने से ये ग़द्दार बैठे-खाऊ मोटे होते हैं।"

कल्लू सोचता रहा, "भैया, इसी तरह से वह कहता था, सब सच कहता था !"

उदिया सड़क के किनारे पेड़ के नीचे वहीं शीशम के पेड़ के नीचे सोते-सोते चौंक कर उठ बैठी।

"क्या है बापू ?"

"कुछ नहीं बेटी।"

उदिया की आवाज़ सुन कल्लू उठा। उसने एक लम्बी साँस ली। और सड़क की तरफ़ देखने लगा। सड़क सुनसान थी। दिन काफ़ी ढल चुका था।

"बेटी उठ, चल।" कल्लू ने कहा।

"अच्छा बापू" कहती हुई हाथ में लोटा लेकर उदिया खड़ी हो गई। कल्लू ने भी अपना गट्ठर सम्भाला। दोनों आगे बढ़े।

अभी मील भर रास्ता तै किया था कि सामने बड़ी-बड़ी चिमनियाँ दिखाई देने लगीं। नभ धुँये से भरा था। थोड़ी ही दूर पहुँचे थे कि शहर की बस्तियाँ भी दिखाई देने लगीं। उदिया काले-काले धुयें और

बड़ी-बड़ी चिमनियों को आश्चर्यपूर्ण और भयभीत नेत्रों से देख रही थी।

सड़क के दोनों तरफ़ देखते हुये कल्लू और उदिया चलते-चलते शहर में पहुँचे। शाम हो गई थी। रात बिताने का कोई ठिकाना नहीं था।

कल्लू ने रास्ता चलते-चलते अपने ही माफ़िक कपड़ा पहिने एक ग़रीब से पूछा—भैया यहाँ रहने का ठिकाना कहीं मिलेगा? हाँ-हाँ ज़रूर मिलेगा, ज़रा आगे १० क़दम पर धर्मशाला है वहाँ चले जाओ; रहने को मिलेगा।

वे दोनों (कल्लू उदिया) आगे चलकर धर्मशाला में पहुँचे। कल्लू ने चौकीदार से रात भर ठहरने के लिये बातचीत की, चौकीदार ने रहने के लिये इजाज़त दे दी। गठरी में बँधा हुआ सत्तू कल्लू ने निकाल के थाली में सान के, उदिया को खाने को दिया, और ख़ुद खाया। बाद में दोनों सो गये।

सोते-सोते कल्लू ख़याल दौड़ाता था। कहाँ काम मिलेगा। क्या काम मिलेगा? साथ में जवान लड़की है। परदेश का मामला है। रहने के लिये कोई ठिकाना नहीं है। इसी संकट में कल्लू पड़ा था। उसकी अक़ल काम नहीं करती थी। क़रीब दो बजे के बाद कल्लू के नींद लगी। वह सो गया। उदिया भी सो रही थी।

सवेरा हुआ। दोनों उठ के रोज़ी की तलाश में चल दिये। आगे चलकर पुल पार कर उस तरफ़ गये, जहाँ कुछ मज़दूर खड़े थे। उसके पास ही एक बड़ा भारी कारखाना था। आवाज़ बड़े ज़ोरों से हो रही थी। उदिया ने जैसे ही घड़घड़ाहट की आवाज़ सुनी, वह काँपने लगी। और डर कर कल्लू के बग़ल में हो गई।

"बापू!"

"क्या है बेटी!"

वह क्या घड़घड़ा रहा है? अपने गाँव में तो ऐसा नहीं था।

"हाँ बेटी अपने गाँव में नहीं था, यह तो शहर है। शहर में बड़े-बड़े कारखाने रहते हैं। क्या डरती है ? अरे, काम मिल गया अगर, तो इसी में काम करेंगे, यह कपड़ा बुनने का कारखाना है बेटी ?"

"इसमें क्या करेंगे ?"

"काम करेंगे बेटी।"

"कैसा काम ?"

"कोई भी काम (मजूरी) जो मिलेगा, वही करेंगे, नहीं तो खायेंगे क्या बेटी ? उदिया चुप रह गई। उसके दिल पर उदासी छा गई, वह सोच में पड़ गई, मिल के गेट पर वे दोनों खड़े थे, दिहाती थे ही, फिर उनसे कौन पूछता ? कहाँ से आये हो ?"

कल्लू बड़ी हिम्मत करके मजदूरों के जत्थे में जाकर बैठ गया, और फिर चिलम पीकर कहने लगा—"मैं अभी दिहात से आया हूँ। साथ में, मेरी लड़की है, कोई क़िस्म की नौकरी अभी नहीं मिली, रहने का भी ठिकाना नहीं है। आप लोग देशभाई हैं और ग़रीब के वजह से हम लोग सब भाई-भाई हैं। इसलिये मेरे रहने, सोने-बैठने के लिये, घर और नौकरी की तलाश कर दीजिए। मेरा यहाँ कोई नहीं है। जो कुछ हैं सो आप ही लोग हैं।"

मिल के गेट पर बैठे हुए मज़दूर कल्लू की बातें सुनकर चिन्तित हो गये, सब लोगों का खयाल कल्लू के तरफ़ खिंच गया, बगल में बैठी हुई उदिया निराशा में डूबती, उतराती थी।

मिल के गेट पर बैठे हुये मज़दूरों ने आपस में बातचीत करके कल्लू की नौकरी ठीक करने के लिये सलाह किया, कि चल के मुक़ादम से कहा जाय कि साल, खाते में झाड़ू वाला में भरती कर लें, मिल की सीटी हुई लोग काम पर जा रहे थे। कोई कल्लू को भी मिल के अन्दर ले गया।

कल्लू, उदिया को मिल के गेट पर बैठा कर, नौकरी की लालच से मिल के अन्दर गया। मिल चालू हुई, साप टीन इंजन की घड़घड़ा-

हट, सनसनाहट उस दैत्याकार भयानक चिमनी की आवाज़ सुन कल्लू घबड़ा-सा गया। वह जमीन पकड़ कर बैठ गया।

कल्लू को मिल के अन्दर ले जाने वाला मज़दूर साथी कल्लू का हाथ पकड़कर चलता बना, उसने कहा—"घबड़ाओ मत, इसीसे तो कारखाना चलता है।"

आगे चलकर बाविन खाता में पहुँचे। मुक़ादम से बातचीत हुई। कल्लू के बाबत। कल्लू ने हाथ जोड़ कर अपनी दिहाती बोली में कहा—"भैय्या मैं ग़रीब आदमी हूँ, दिहात से आया हूँ, कोई क़िस्म की रोज़ी नहीं है। रहने खाने का कोई ठिकाना नहीं है। साथ में एक लड़की है। इसलिये कोई काम में लगा दो।"

मुक़ादम—"तुम कौन काम करोगे ?"

कल्लू—"कोई भी काम दे दो, हमारे करने के काबिल।"

मुक़ादम—"आजकल काम धाम खाली नहीं है। आदमी ज्यादा हैं। कोई छुट्टी भी तो नहीं लेता, कहाँ काम दूँ।"

कल्लू—"भैय्या कहीं भी लगा दो, ग़रीब आदमी हूँ। किसी किस्म का ठिकाना नहीं है।"

मुक़ादम—"अभी जाओ, शाम को ६ बजे मिल की छुट्टी होगी, गेट पर मुझसे मिलना।"

कल्लू मिल से गेट के बाहर वापस आया। उदिया बैठी हुई टुकुर-टुकुर ताक रही थी।

"बापू ?"

"क्या है बेटी ?"

"काम लगा पिताजी ?"

"अभी नहीं काम लगा बेटी, शाम को मुक़ादम ने मिलने के लिये बोला है।"

मुक़ादम किसे कहते हैं पिताजी ?

मज़दूरों से काम लेने वाले को मुक़ादम कहते हैं।

दोनों को गेट पर बैठे-बैठे बारह बज गया, उदिया भूख से तड़फ रही थी। कल्लू नौकरी के फ़िक्र में सोच रहा था। क़रीब दो बज चुका था। कल्लू गठरी खोल कर सत्तू निकाल के थाली में सान के उदिया और वह खा-पीकर कल्लू चिलम चढ़ाने, आग की ज़रूरत से भड़भूज के दुकान पर गया। भुजइन कल्लू के हाथ में चिलम देखते ही जामा से, बाहर हो गई, कहने लगी—"ये चिलमा वालों की दिन भर आवा-जाही लगी रहती है।

कल्लू—"ज़रा आग दे दो माताजी।"

भुजइन—"आग ले लो, लेकिन माताजी मत कहना। अभी सिर्फ़ एक बेटी की माँ, और तुम ५० वर्ष का बूढ़ा मुझे माताजी आग दे दो!"

कल्लू—"अच्छा ग़ुस्सा मत हो! ज़रा बहुरिया आग दे दो।"

भुजइन के ख़ुशी का कोई वारा पार नहीं था। इस उम्र में उसे आज तक बहुरिया किसी ने कहा ही नहीं था। उसे बहुरिया कहने वाला उसका ससुर पहिले ही चल बसा था। उसने आग देते हुये कहा—"बाबा कहाँ रहते हो?"

कल्लू—"क्या बतावें बहुरिया, मैं दिहात का रहने वाला हूँ। ज़मींदार के ज़ुल्म से खेत लिल्लाम हो गया फिर मुझे शहर में आना पड़ा। साथ में एक जवान लड़की है। न कोई रहने का ठिकाना है। न कोई रोज़ी।"

भुजइन—"कहाँ ठहरे हो बाबा?"

"क्या बतावैं बहुरिया, मिल के गेट पर वही शीशम के पेड़ के नीचे।"

"अच्छा बाबा, तुम हमारे ओटले में ठहर जाओ। जब तुम्हें रहने की जगह मिल जायगी तो चले जाना।"

"बहुत अच्छा बहुरिया, तुमने हमारे मुसीबत में कुछ हिस्सा बटा लिया, कहते वह हाथ में चिलम लिते हुये मिल के गेट शीशम के पेड़ के नीचे पहुँचा। उदिया उदास बैठी हुई थी।"

"बेटी उठाओ गठरी चलो ?"

"कहाँ पिताजी ?"

"यही सामने वाले भड़भूज की दुकान पर बेटी, बेचारी भुजइन ने रहने को जगह दिया है।"

दोनों गठरी उठा के दस क़दम चल कर भड़भूज के दुकान पर जा पहुँचे। और कल्लू ओटले में गठरी रख के कहने लगा—

"यही बेटी है, बहुरिया जो! हमारे साथ यह भी मुसीवत उठा रही है। क्या करें इस दुनिया में ग़रीबों का मदद करने वाला कोई नहीं है। हाँ बहुत से लोग किसानों की आज़ादी का नाम लेकर नेता बन कर लूट रहे हैं। ये ग़द्दार मीठी-मीठी बातें करके हम ग़रीबों को आज़ादी का सबक सिखा रहे हैं। आज़ादी के माने यही है कि ग़रीब किसानों की ज़मीनें भी लिल्लाम कर ली जाय। धिक्कार है ऐसी आज़ादी को।"

भुजइन—"बाबा, ग़रीबों का दुनिया में कोई नहीं है। भगवान भी ग़रीबों की कुछ नहीं सुनता। जो दिन भर काम करता है, उसे तन भर कपड़ा पेट भर रोटी नहीं मिलती। और जो काम नहीं करता वह निकम्मे बड़ी-बड़ी गद्दियों पर बैठे रहते हैं। वे पैदल नहीं चलते, उनके चढ़ने के लिये, हाथी, घोड़ा, टमटम और मोटर तैयार रहती है।"

"बहुरिया जब तक ग़रीब सब एक नहीं होंगे, ग़रीब ही रहेंगे। जिस दिन सब ग़रीब एक हो जायेंगे धनियों का बेड़ा गर्क कर देंगे। अच्छा, फिर बातचीत करेंगे। उदिया तुम्हारे पास रहेगी। मैं मिल के गेट पर जाता हूँ। शाम को ६ बजे गेट पर मुक़ादम ने बुलाया है।"

शाम का वक्त हो गया था। ६ बजने वाला था, कल्लू मिल के गेट पर खड़ा मुक़ादम से मिलने का इन्तज़ार कर रहा था। मिल की सीटी हुई। जिस आदमी के साथ कल्लू मिल के अन्दर गया था उसी के साथ मुक़ादम गेट के बाहर आया। कल्लू आँखें फाड़फाड़ कर देख रहा था। उस भीड़ में कल्लू की आँखें काम नहीं करती थीं। मिल से निकले हुये मज़दूर अपने घरों को जा रहे थे। कल्लू हर तरफ़

आँखें दौड़ाता था। मिल के गेट ही पर मुक़ादम एक आदमी से बात कर रहा था। कल्लू की आँखें उधर भी पड़ीं। वह पहचानते ही फ़ौरन वहाँ पहुँचा।

मुक़ादम के साथ वाले मजदूर ने कल्लू को अलग बुला कर कहा—“देखो भाई आजकल मिल में आदमी ज्यादा हैं, काम खाली नहीं है। अगर १० रुपया घूस दे दो तो बदली में नौकरी मिल जायगी। मुक़ादम से हमने कहा है। वह तैयार हो गया है।”

“भैय्या १० रुपया को कौन कहे एक कानी कौड़ी भी हमारे पास नहीं है। मुक़ादम से कह दीजिए ग़रीब आदमी है।”

कल्लू उसी जगह खड़ा था। वह आदमी मुक़ादम के पास गया और उसने कल्लू की बातें कही।

“देखो अभी उसके पास रुपया नहीं है। हाँ अगर पगार मिलने पर १० रुपया देने के लिये तैयार होवे, तो कह दो कल से काम पर आवे। लेकिन बदली में काम करना पड़ेगा। इस बात को समझा देना, और यह भी समझा देना कि किसी से १० रुपये के बाबत् बातचीत न लावे नहीं तो मेरी बड़ी बदनामी होगी”—मुकादम ने कहा।

जिस तरह से मुक़ादम ने कहा उसी तरह उस आदमी ने कल्लू को समझाया।

“भैय्या तनखाह कितनी मिलेगी ?”

“एक रुपया रोज़। जितने दिन काम करोगे उतने रुपये तनखाह मिलेंगे।”

“अच्छा भैय्या तनखाह मिलने पर १० रुपया देंगे, आपकी बड़ी कृपा हुई।”

“मेरी क्या कृपा, तमाम मिल भर में आजकल यही शिशटम चल रहा है। जो रुपया देता है उसे काम मिलता है। अच्छा तो कल सबेरे ६ बजे इसी जगह मिलना, फिर मैं अपने साथ तुम्हें मिल के अन्दर तुम्हारे काम करने वाले जगह पर पहुँचा दूँगा।”

कल्लू वहाँ से बहुरिया के घर आया। करीब ७½ बजे का समय था।

"क्या हुआ बापू ?"

"नौकरी ठीक हो गयी है, बेटी ? लेकिन तनखाह मिलने पर १० रुपया खूस देनी होगी।"

"कितनी तनखाह मिलेगी पिता जी ?"

"एक रुपया रोज़ बेटी।"

कल्लू गठरी खोल कर थाली में सत्तू निकाल रहा था, कि उदिया ने कहा कि सत्तू मैं इस वक्त नहीं खाऊँगी। बाई जी ने भुजा चबाने को दिया था, अब भूख नहीं है। कल्लू ने सत्तू सान कर एक पीड़ा बना कर उदिया को दिया।

"ले ज़रा-सा खा ले बेटी, रात को भूख लगेगी।"

"मुझे भूख नहीं है कहते हुये पिता का दिया हुआ सत्तू का पीड़ा लेकर उदिया खाने लगी। और कल्लू भी सत्तू खाकर पानी पीकर रात भर बिता कर सवेरे मिल के फाटक पर पहुँचा। क़रीब २० मिनट के बाद मिल की सीटी बोली—उसका साथी आया, और वह उसके साथ मिल में गया, और मुक़ादम से मुलाक़ात हुई।"

"तुम्हारा नाम क्या है ?" मुक़ादम ने पूछा।

"मेरा नाम कल्लू है; मुक़ादम जी।"

मुक़ादम ने कल्लू को साथ लेकर साल खाते (बुन्ते) में झाड़ू लगाने का काम करने को कहा।

कल्लू और झाड़ूवालों से बातचीत करके हाथ में डबल झाड़ू—चौड़ा बँधा हुआ लम्बे बाँस से हर गली, मशीन के आगे-पीछे लाइन में झाड़ू लगाकर, झाड़ू से जमा किये हुये कचड़े की सफ़ाई, चुनाई करता। लोहे के पुर्ज़ों को अलग रखता, कपड़े के टुकड़ों को अलग, सूत को अलग और चमड़े के टुकड़ों को भी अलग रखता था। खाते में स्टीम की गर्मी से सब मज़दूर, कपड़ा बुनने वाले और कल्लू भी परेशान थे।

इस तरह कल्लू दिन भर, मास्टर, जाबर की धमकी सहते हुये काम करके अपने रहने के ओटले के पास आता, गठरी का सत्त भी

धीरे-धीरे खत्म हो रहा था। उदिया भुजइन के काम-धाम करके आधा पेट खाना चबैना से गुज़र कर लेती थी।

कल्लू के तनखाह को मिलने को अभी बीस दिन था। उसे पेट पालना मुश्किल था। उसने हिम्मत करके कहा।

"अब तो गठरी का सत्त भी खत्म हो गया बहू जी! कुछ उधार मुझे दे दो, तनखाह मिलने पर दे दूँगा।"

"अच्छा बाबा, घबड़ाओ मत, ग़रीबों का सहारा ग़रीब ही होता है। उदिया मेरे घर काम करेगी और खायगी, आप के लिये मैं आटा दे देती हूँ। आपको जब तनखाह मिलेगी—मुझे दे देना।"

"बहू जी! तुमने इस परेशानी में मुझे बहुत मदद दिया। भगवान् तुम्हारा भला करें।"

"बाबा! ग़रीबों का सहारा ग़रीब ही है, आपका यह कहना ग़लत है कि भगवान् तुम्हारा भला करे। भगवान ग़रीबों का नहीं है। अगर वह है तो अन्यायी है। वह है तो अमीरों का है। वैसे तो वह कहीं दिखाई नहीं देता। फिर उसका नाम लेना बेकार है। बाबा! मैं उस अन्यायी भगवान् का नाम लेना पाप समझती हूँ।"

"बहू, गांधी महात्मा भी तो भगवान् का औतार लिये हैं।"

"बाबा, जो लोग पढ़े नहीं हैं, वे भूले हैं, अनजान हैं, और जो लोग पढ़े हैं उन्हें अच्छी तरह मालूम है कि गांधी महात्मा किसके औतार हैं। बाबा! मैं तो भूजा ही बेचती हूँ, लेकिन हमारे घर वाले इन्हीं सब कामों में रात-दिन लगे रहते हैं। वे इसी राजनीतिक बातों में पड़ कर मुझे भी थोड़ा-बहुत पढ़ाया-लिखाया, हालाँकि मैं अभी भी अपने दोनों प्राणी के जीविका चलाने के लिये भूजा की दुकान खोले हूँ।"

बात साफ़ है बाबा! बिरला सेठ हिन्दुस्तान के सेठियों का बाप है। बिरला सेठ हजारों-लाखों मजदूरों के खूनों को चूस कर इतना भारी और बड़ा धनी हुआ है। मजदूरों के खून-हड्डी के गारे-चूने से बने हुये महलों में वह रहता है। गांधी जी बम्बई जब जाते हैं तो उसी

महल में जो विरला भवन (Birla House) के नाम से प्रसिद्ध है, ठहरते हैं ! फिर क्या गांधी जी मज़दूरों-किसानों की आज़ादी चाहते हैं ? कभी नहीं। अब हिन्दुस्तान के मज़दूरों, किसानों को .खुद अपना ख़याल करना होगा, उन्हें आगे बढ़ना होगा। उन्हें अपने सुर्ख़ झण्डे के नीचे जमा होना होगा।

'मज़दूरों-किसानों में पूँजीपतियों, ज़मीन्दारों के एजेन्ट देशभगत बन कर अपना उल्लू सीधा करने को आ रहे हैं। इन पूँजीपतियों के दलालों को अपने बीच से अलग फेंक देना होगा। जिस तरह से दूध की मक्खी।"

"गांधी जी का गांधीवाद न कुछ कर सका है न कर पायेगा ?"

"वहुरिया, तुम्हें तो बातें बहुत अच्छी-अच्छी मालूम हैं। लाल झण्डा मज़दूरों का झण्डा है ?"

"बाबा, शुरू-शुरू में लाल झण्डा हिन्दुस्तान में मज़दूरों ने लहराया, फिर किसानों ने, और आज तो लाल झण्डे के नीचे मज़दूर, किसान ही नहीं, विद्यार्थी संघ; महिला संघ, तथा बीच तपक़े के नौजवान इसी झण्डे के नीचे एक नया समाज बसाना चाहते हैं जिसमें कोई किसी पर ज़ुल्म नहीं कर सकता है। फिर बताओ बाबा जी ! लाल झण्डा अच्छा है या नहीं ?"

"वहुरिया, लाल झण्डा अच्छा और उत्तम झण्डा है।"

× × ×

बाबा और बहू की बातचीत चल रही थी; कि बहू का पति चन्द्रभान आ गया। वह आते ही कहने लगा—

"सुनो, मैं देहली गया था। वहाँ पर तीनों झण्डा लहरा रहे थे। मज़दूरों-किसानों का झण्डा, लीग का हरा झण्डा और तिरंगा झण्डा वहाँ के कम्पनी बाग़ में। देहली कमिटी कम्यूनिस्ट पार्टी के तरफ़ से एकता दिवस मनाया जा रहा था।"

"फिर तीनों झण्डा क्यों लहराया जा रहा था ?" कल्लू ने कहा।

"देखो बाबा, आज हिन्दुस्तान में सब को मिल कर अंग्रेज़ी सर-

कार को भगाना है। मज़दूरों-किसानों की पार्टी, कम्यूनिस्ट पार्टी, गांधी-जिन्ना के समझौते पर एकता दिवस मना रही थी। क्योंकि जब तक अंग्रेजी सरकार को भगाया नहीं जाता, तब तक हमें यहीं नर्क का जीवन बिताना पड़ेगा। इसलिये आज मज़दूरों-किसानों को "गांधी-जिन्ना फिर मिलें," आवाज़ उठाना है। क्योंकि जब तक हिन्दुस्तान में राष्ट्रीय सरकार नहीं बनती, मज़दूरों-किसानों का राज एक सपना मात्र है।"

"हाँ भैया, लेकिन इन खद्दरधारियों को देखने से दिल जलने लगता है।"

"बाबा, आज एकता करने से ही देश आज़ाद होगा। हाँ, अगर मज़दूरों-किसानों में कोई फूट डाले तो उसे मार भगाना होगा।"

अखबारों के पढ़ने से मालूम होता है कि कहीं-कहीं मिल-मालिकों के रखवाले, और मज़दूरों-किसानों की आज़ादी के दुश्मन अपने आपको देशभगत कहने वाले गद्दार नई-नई युनियनें बना रहे हैं। जबकि पुरानी यूनियनें काफ़ी दिनों से काम कर रही हैं तो नई युनियनें बनाने की क्या ज़रूरत। ये गद्दार लोग नई-नई युनियनें बना कर मज़दूरों में फूट डाल कर मिल-मालिकों, कारखानेदारों और सरकार के हाथ मज़बूत कर रहे हैं।

"भैया चन्द्रभान ये खद्दर वाले नई युनियन क्यों बनाते हैं।"

"बाबा, आज हिन्दुस्तान में कम्यूनिस्ट पार्टी कितनी ज़ोरदार हो गई है। उसका संगठन मज़दूरों, किसानों, विद्यार्थियों, महिलाओं में बड़े ज़ोरों से हो रहा है। पूँजीपति और उनके रखवाले दलाल लाल झण्डे की तहरीक़ से घबड़ा कर बौखला गये हैं। उनकी मति मर गई है। वे मायूस होकर एकता के बजाय फूट का मार्ग अपना रहे हैं। लाल झण्डा मज़दूरों के खूनों से रंग के सुर्ख हुआ है। यही सिर्फ़ दुनिया भर के मेहनतकशों की आज़ादी का चिन्ह और प्राणों से प्यारा झन्डा है।"

× × ×

काम करते-करते कल्लू के तनखाह का दिन आया, कुल तनखाह पन्द्रह दिन का १५ रुपया मिला था। कल्लू ५ रुपया मुक़ादम को देने लगा, कि "मुक़ादम साहब ५ रुपया अगले तनखाह में दे देंगे। इसी १० रुपये में महीना भर दिन काटना है।"

"देख कल्लू, सब के सब यानी दसो रुपया दे दे। नहीं तो कल से काम पर आना बन्द कर देंगे। अब साला चालबाज़ी करता है।"

"मुक़ादम साहब, मैं क्या जानू चालबाज़ी, अगले माह में पाँच रुपया और दे देंगे।"

"अबे, उल्लू के पट्ठे रख दे दस रुपये, नहीं तो चार हाथ लगाऊँगा। जानता नहीं है। बड़े-बड़े दादा लोगों को भी परेशान करने में एक हूँ। अभी कल ही चौरस्ते पर गुण्डों से मुठभेड़ हो गई, सबको मार भगाया। फिर तू, किस खेत का बथुआ है। ला रुपया।"

कल्लू मजबूरन् दस रुपया घूस मुक़ादम को देकर अपने ओटले पर आया। बहूजी से जो उसने आटा लिया था उसका पैसा देकर, कुछ अपने खाने के लिये आटा लाया। कल्लू सोचता था कि अब दिन अच्छा होने वाला है। क़रीब ३ दिन बदली का काम और किया था कि मुक़ादम ने छटनी कर दी, और उसने कहा, "जाओ अब काम नहीं है।

कल्लू निराश, अधमरा-सा हो गया, उसको कोई रास्ता दिखाई नहीं देता था। वह इस अन्यायी समाज को घृणा से कोस रहा था। जहाँ देखो वहीं बेईमानी चल रही है।

वह सोचता था कि जब तक इस समाज को दफ़नाया नहीं जायगा, ग़रीब लोग इसी तरह पिसते रहेंगे।

"क्या हुआ पिता जी ?"

"हुआ क्या बेटी ! उस दिन १० रुपया मुक़ादम को घूस भी दिया, आज काम से छटनी कर दिया।"

उदिया पिता के काम छुट जाने से बहुत दुःखी हुई। वह शोक-सागर में डूबती-उतराती थी। कल्लू जब काम करता था उदिया ख़ुशी

में थी। वह अपने दिल में सोचती रहती थी कि पिता जी रुपया कमाएँगे तो मेरी शादी करेंगे। वह खुश रहती थी। लेकिन आज उसके सारे इरादों में पानी फिर गया। वह व्याकुल थी।

"बाबा, अब कौन नौकरी करोगे?"

"कौन नौकरी करूँ बहू जी! कहाँ मिलेगी नौकरी?"

"बाबा, इस निकम्मे समाज को दफ़नाने के लिये भी तो काम करना है। उदिया हमारे यहाँ काम कर रही है। मेरी और कोई सन्तान नहीं है। उदिया आज से मेरी बेटी है। आप हमारे घरवाले (कामरेड) के साथ काम करें। खाने की चिन्ता न करें। हम लोग किसी दिन काम आयेंगे।"

कल्लू की सारी निराशा जाती रही। वह हाथ में लाल झण्डा लेकर मज़दूर बस्तियों में मिल के गेटों पर कामरेडों के साथ मीटिंग में हिस्सा लेता है।

भुजइन ने उदिया को सिखा-पढ़ा कर उसे भी ख़ूब निपुण और चालाक बना दिया। आज वे चारों पूँजीवादी समाज को दफ़नाने के लिए लाल सितारे के नीचे काम कर रहे हैं।

मिल के गेट पर गेट मीटिंग में अक्सर कल्लू नारा लगाया करता है। मज़दूर संगठन—ज़िन्दाबाद।

मज़दूरों में फूट डालनेवालों को—दफ़नायेंगे।

लाल झण्डा—ज़िन्दाबाद।

दुनिया भर के मज़दूरो—एक हो जाओ।

[illegible] — जिन्दाबाद

७

सुखरानी के बच्चे !

सुखरानी चमारिन मधवापुर गाँव में सबसे ग़रीब स्त्री थी। मधवापुर गाँव में चार सै बीघे ज़मीन का एक छोटा-सा गाँव था। उसमें ब्राह्मण १ घर, कायस्थ १० घर, अहिर १० घर, कहार ३ घर, कुम्हार ३ घर, बढ़ई १ घर, आरख १ घर, पासी ३ घर, नाऊ १ घर, धोबी १ घर, और चमार ५ घर, सब ३६ घर थे।

गाँव का मालिक चौथाई हिस्से फूलपुर महतों का, चौथाई हिस्सा रस्तोगी (बनिया) विस्को हर बाजार वाले का, चौथाई हिस्सा का आधा सिकटा बाबू साहब का, बाक़ी चौथाई का डेढ़ हिस्सा गाँव के ब्राह्मण और कायस्थों का था। गाँव में बसे हुये बाक़ी के लोग ग़रीब थे। हाँ, कायस्थों और ब्राह्मण देवता की गुज़र अच्छी तरह से होती थी। गुज़र अच्छी तरह से क्यों न हो? पटवारीगिरी और जजिमानी जो थी। कायस्थों के घर पर भी खेती होती थी और उधर तो उनके पटवारीगिरी नौकरी से रुपया अन्न गँजा रहता था। पटवारी साहब असामियों और ज़मीन्दारों में जैसा प्रेम का बीज बोते हैं इसे तो गाँव के ग़रीब किसान अच्छी तरह जानते हैं और इसका वे ही फ़ैसला करेंगे।

ब्राह्मण देवता का क्या पूछना था घर में खेती कराते थे, दूसरे २०० घर जजिमानी नैपाल की तराई इलाके थरुहट में थी। उन्हें तो सिर्फ़ चलने ही का काम था। पैदल नहीं। कलुई चितकबरी घोड़ी पर। जजिमान लोग अक्सर करके ज्यादा थारू लोग थे, ब्राह्मण देवता, देवता ही थे। जजिमान लोग छुवा संकल्प का धन जमा रखते थे। किसी दूसरे ग़रीब ब्राह्मण को देते ही नहीं थे। ब्राह्मण देवता जिस समय जजिमानी में पहुँच जाते थे उनकी पाँचों अँगुली घी में रहती थी। हाँ,

जिस दिन थारू लोग जंगली सुअर का मांस पकाते थे उस दिन ब्राह्मण देवता, अतवार, सोमवार का दिन समझ करके फरहारी कर लेते थे, फरहारी में केले, सिंगारे, और जमी हुई मक्खन सहित दूध तथा औटाया हुआ दूध ७ सेर। इस तरह से कथा, बरत, में ब्राह्मण देवता को काफ़ी धन की आमदनी रहती थी।

कलुई चितकबरी घोड़ी तो उनके सवारी ही से परेशान रहती थी। क्योंकि वे मोटे थे। मोटे क्यों न हों, माल चीज़ खाने को मिलता था, और मेहनत काशी जी के नये पत्रे के सोम, मंगल का सिर्फ़ बताना था। जमा हुआ धन तीन बैल पर लदा के अपने घर लाते थे। उनकी पत्नी, बच्चे बड़े ख़ुशी में हो के खाते-पीते गुलछर्रे उड़ाते थे। रह गये बाक़ी के लोग ! और सुखरानी चमारिन की हालत तो बिल्कुल गिरी हुई थी।

उसका पति टुनमुन चमार चाय बगान आसाम (सिलहट) चला गया था, वहाँ क्या करता था किसी को खबर नहीं। सुखरानी चमारिन के नाम उसका भेजा हुआ मनीआर्डर या चिट्ठी भी आते किसी ने नहीं देखा। घर पर सुखरानी के न एक अंगुल खेत था न एक पूँछ गाय, बकरी या सुअर। उसकी सम्पत्ति थी गाँव के बाहर फूस की टूटी छोट मड़ैय्या (झोपड़ी) और काठ-मिट्टी के बर्तन।

सुखरानी के विपत्ति का कोई अन्त न था। उसके पाँच बच्चे थे। सबसे बड़ी लड़की जगरनिया फिर तीन बेटे—मगनू, लगनू और भगनू।

गाँव में बसने वाले लोग ज्यादा हिस्से में ग़रीब ही थे। हाँ, कुछ कायस्थों के यहाँ कभी-कभी कूटने-पीसने का काम मिल जाता था। लेकिन यह मजूरी हमेशा की नहीं थी। सिर्फ़ फ़सल के मौक़े पर मजूरी मिलती थी। दूध छोड़ने के बाद सुखरानी के बच्चों को शायद ही रूखी-सूखी रोटी मिली हो। अगहन-पूस के महीनों में सुखरानी के साथ जगरनिया कुछ बड़ी होने के बाद खेत काटने जाती थी।

छोटे बच्चे ढकुली लेकर खेत में बाली चुनने जाते थे। उस समय

दो माह तक सुखरानी अपने बच्चों सहित रूखी-सूखी पेट भर अन्न खा लेती थी। जेठ-असाढ़ में आकाश के बादलों से जब पानी की बूँदें खेतों में पड़ कर एक दफ़े पानी ही पानी का ढेर कर देती थीं उसी पानी के बरसने से सुखरानी का काम महीना भर चल जाता था। खेतों में करमुआ का एक क़िस्म का घास पैदा होता है। उसे काट-खोट के जगरनिया साग पकाती थी और आम के गेठुलियों को बाग़ और गाँव के घरों के कूड़ों-करकटों से छान-बीन खोज कर फोड़-पीस के बनाई हुई रोटियाँ १०, १५ दिन चल जाती थीं। सावन-भादों के महीनों में मकई के खेतों में ककड़ी (फूट) ज्यादा बोयी जाती है। सुखरानी के नन्हें-नन्हें बच्चों को खेत वाले दयालु किसान उनके हाथों में एक-दो ककड़ी पकड़ा देते थे जिससे सुखरानी के बच्चों को दिन भर का सहारा हो जाता था, जब तक खेत की कटाई में भी कुछ कोदो, साँवा, मेड़वा माँ-बेटी को मजूरी में मिल जाती थी।

सुखरानी के बच्चों को जाड़ा काटने में बड़ी परेशानी होती थी। वे लोगों के दरवाज़ों पर शाम को जलते हुये कौरों के आग के सहारे से जीते थे।

नींद आ जाने पर कोदों के पुवाल में घुस जाते थे। सबेरे धूप निकल जाने पर किसी की दीवार के आड़ में धूप लेते थे।

× × ×

मगनू को जूड़ी आते दो महीने हो गये थे। जूड़ी आने के बाद बुख़ार भी आना शुरू हुआ और फिर तिजरिया भी बराबर आती रही। जूड़ी में ठण्ढ ज्यादा लगती थी। लेकिन सुखरानी के बच्चों को ओढ़ने के लिये कपड़ा नहीं था। मगनू थर-थर काँपता था। उसके दाँत कटकट बोलते थे, चिल्लाता था, "अरे माँ, जाड़ा लग रहा है।" माँ कहाँ से रज़ाई गिलाफ़ लावे ? वह रोती हुई रोते बच्चों को देह से छाप लेती थी, प्यार की बातें करती थी, कुछ सहारा देती थी, "बच्चा घबड़ाओ मत जल्दी अच्छे हो जाओगे।"

जगरनिया अब चौदह वर्ष की थी। उसका ब्याह हो गया था। बेचारी का नसीब फूटा-सा था। ससुराल में झगड़ा-लड़ाई के कारण वह माँ के पास रहती थी। मजूरी से मिला हुआ दो सेर चना जगरनिया घर लेकर आई कि बहिन को आते देख मगनू भूख से तड़फ कर माँगने लगा। जगरनिया चना भूनने के लिये जब तक इन्तज़ाम में लगी हुई थी कि तब तक मगनू ने कच्चा चना चबाना शुरू कर दिया और प्यास लगने पर मटके का पानी भी पी लिया।

मगनू को दिन-ब-दिन जूड़ी-बुखार लथेरता जा रहा था। साथ ही साथ वह कमज़ोर भी होता जा रहा था। सुखरानी दवाई कहाँ से लावे जब बच्चों को खाने का ठिकाना नहीं था। कोई फ़सल कटने का मौसम था ही नहीं। कुटाई-पिसाई की भी मजूरी नहीं मिलती थी। उधर मगनू की अवस्था और ज्यादा नाज़ुक होती गई। उसका बदन पीला पड़ गया, आँखों में काँवरि हो गई। बदन में सिर्फ़ हड्डी की ठठरी दिखाई देती थी।

बीमारी और ग़रीबी से खाना न मिलने, बच्चों की दवाई न मिलने इत्यादि संकटों के कारण सुखरानी दुःखी होती जा रही थी। उधर मगनू की हालत गिरती गई और बदन में सूजन आ गई थी। जगरनिया कोदो का पुवाल गुदरी धूप में सुखा देती थी लेकिन जब भी गुदरी में जुयें भरे रहते थे।

सुखरानी रात-दिन चिन्ता में डूबती जाती थी। उसने अभी गाँव के कायस्थ पटवारी भैय्या के बड़े लड़के रामरक्खा को इसी बीमारी से मरते हुए देखा था। गाँव में जिस किसी ने जैसी दवाई बतायी सुखरानी ने उसे पिलाने में रत्ती भर कसर न रखी, लेकिन मगनू को फ़ायदा नहीं हुआ। सुखरानो बाज़ार की दवाई खरीद ही नहीं सकती थी, खर खोदवा दवाई करते-करते जब आराम नहीं हुआ तो सब कुछ भगवान्, प्रभू पर छोड़ दिया।

पूस माह खत्म होते-होते भगवान् प्रभू के सहारे छोड़े हुये मगनू गुज़र गये। सुखरानी जगरनिया ख़ूब रोईं, गाँव के कुछ लोगों में

चमार, पासी, धोबी, आरखों ने मिलकर उसे तालाव के पास गाड़ दिया। सुखरानी हाय मगनू, हाय ~~मगनू~~ करके सर धुन कर रह गई। मगनू के लिये अच्छा ही हुआ, दुनिया के सड़े-गले निकम्मे समाज में आकर उसने क्या सुख देखा? जो कुछ देखा सहा, सब दुख ही दुःख देखा।

लगनू अब ग्यारह वर्ष का था। पिछले साल से उसने गाँव के एक कायस्थ के यहाँ हल जोतने की नौकरी की थी। भगनू गाँव भर की गायें चराता था, माँ-बहन भी कुछ मजूरी कर लाती थीं। इस तरह सुखरानी को निमन दिन की आशा हो चली।

लेकिन नसीब को यह मंजूर न था। बुखार-जूड़ी ने लगनू को भी आ पछाड़ा। सावन-भादों में अगहनी की फ़सल बोने बैठाने के समय मालिक के खेत पर जोतने न जा सका। कायस्थ होने से हल की मुठिया पकड़ने में उसके और उसके समाज का धर्म जाता था। उसने अपने असामियों से बेगार लेके खेत जोतवाया, बोवाया। लगनू जूड़ी-बुखार से तंग था।

सुखरानी जगरनिया बियाड़ के खेत से बिया उखाड़ कर बोझ बाँध कर सर पर लाद के जड़हन धान के खेत में बिया बैठाने जाती थीं। गाँठ, जाँघ भर पानी में माँ-बेटी धोती का फाँड़ कसके बिया बैठाती थीं। जोंक पानी में तैरती हुई आकर पाँव में चभक जाती थी। फिर माँ-बेटी खेत से मेंड़ बाँध पर बैठ के जोंकों को पाँव से निकाल कर मट्टी के मटके में निमक पड़े हुये पानी में डाल देती थीं और फिर अपने काम पर डट जाती थीं। गदह बेरिया होने पर खेत के मजूरी की डिवटी पूरी लगा के फिर माँ-बेटी बैठेखाऊ कामचोर मालिक के घर जाकर समूचे दिन की मजूरी तीन-तीन सेर कोदो कच्चा (पक्का सवा सेर) लेकर अपनी टूटी छोटी मड़ैय्या में पहुँचती थीं।

लगनू दिन भर से अकेला पड़ा था; माँ-बहिन की बोली सुनते ही वह रोने लगा। माँ लगनू को कोरे में लेके बैठ गई। भगनू अभी गायें चरा के घर आया ही नहीं था। मजूरी से मिला हुआ कोदो जिसमें

सात भूसी होती है, जगरनिया दूसरे के घर दरने गई थी। कुछ देर बाद भगनू गायों को घर-घर हाँक के अपने मड़ैय्या में आया। और उसके बाद जगरनिया भी सात भूसी दर-छाँट के घर आई।

सुखरानी लगनू को गोद में लेकर वैठी थी और वह गोद ही में कँहर रहा था। उसकी हालत मिनट-मिनट नाज़ुक होती गई और एक घन्टा के बाद माँ के गोद में लेटे ही लगनू चल बसा।

लगनू के मरने के एक साल बाद भगनू ने भी उसका साथ दिया।

सुखरानी जगरनिया के साथ जीती रही। लेकिन उसकी हालत पगली और अधमरी-सी थी। रात-दिन अपने बच्चों की याद में कुँहुँकती थी। हाय भगवन्! हाय भगवन्! हाय लगनू क्या खेतों में जोकों से ख़ून चुसा के तुम्हें इसीलिये पाला था। तुम मुझे अँधेरी दुनिया में छोड़ कर चल बसे! हाय! मैं कितनी निर्लज्ज हूँ कि अपने तीन बेटों को अपने सामने मरते हुये देख कर अब भी बैठी हूँ।"

८

रामदेव-रधिया

रामदेव लूटनमल के हाते में तीन रुपया महीने पर एक छोटी-सी कोठरी ले के रहता था, उसकी बीबी रधिया और तीन बच्चे सुखई, मुखई, तोखई थे।

रामदेव लूटनमल के हाते में सबसे ग़रीब आदमी था। उसके पास धन के नाते टीन के ६ बर्तन, एक लोहे की टूटी करछुल, एक तसला और फूटी टीन की बालटी थी।

रामदेव कृपाराम काटन मिल में बदली में काम करता था। वह मशीन चलाने में साल खाता (बुन्ता) (Weaving Department) में बहुत अच्छा और होशियार पुराना मज़दूर था। जब भी उसे बराबर काम नहीं मिलता था। रोज़ उन बदली वाले मज़दूरों को मिलता था जो मास्टर के साले, बहनोई और .खुशामदी निखट्टू थे।

रामदेव के साथ रोज़ तीस-चालिस बदली वाले वापस आते थे। किसी को ६ दिन; किसी को ८ दिन; किसी को १० दिन महीने भर में काम मिलता था। चार माह से रामदेव नर्क की ज़िन्दगी बिता रहा था। घर में खाने को पूरा नहीं होता था। मकान का भाड़ा भी चढ़ता जाता था और बनिया के यहाँ की उधारीखाता का भी क़र्ज़ा लदा जा रहा था। नन्हें-नन्हें बच्चे बग़ैर कपड़े के थे।

रामदेव सवेरे मिल में काम करने गया लेकिन उस दिन भी काम नहीं मिला। उसके साथ ३० मज़दूर बदली वाले वापस आये। रामदेव ने बदली से वापस आये हुये मज़दूरों को साथ लेकर पाखाने के पास बिड़ीखाने में बैठाकर समझाना शुरू किया……

"मज़दूर भाइयो! यह जो रोज़-बरोज़ हम मज़दूरों के साथ अन्याय किया जा रहा है, कोई छिपी हुई बात नहीं है। कुछ बदली

वाले मास्टर, सुपर्वाइज़र के साले बहनोई हैं, निखट्टू हैं, जिन्हें रोज़ काम दिया जाता है। और कुछ मशीनों के बन्द रहने की वजह से बराबर काम नहीं मिलता। इसलिये, हमारी राय है कि सब साथी मिलकर मज़दूर सभा चलावें।" रामदेव की बातें सारे बदली वाले मज़दूरों के दिलों में जँच गईं। रामदेव, मियाँ नूरे हबीबुल्ला, इलाहीबक्स, धर्मदेव, गोबरधन भगत, तुकाराम, संतसिंह वग़ैरह-वग़ैरह सब मज़दूर सभा के दफ़्तर में जा पहुँचे।

दफ़्तर खुला हुआ था। मज़दूर सभा के सेक्रेटरी का० नूर इलाही और अध्यक्ष का० गोपाल खण्डकर थे। दफ़्तर में पहुँचते ही का० नूर इलाही ने सब मज़दूर भाइयों को बैठाया और पूछने लगे, "साथियो, क्या वजह है कि आज मिलें चालू हैं और आप लोग काम पर नहीं हैं।"

रामदेव—"प्रिय कामरेड, यहाँ पर आये हुये हम सब बदली वाले मज़दूर हैं। हम सब को महीने में किसी को ६ दिन, किसी को ८ दिन और किसी को १० दिन काम मिलता है और कुछ बदली वाले मास्टर सुपर्वाइज़र के साले-बहनोई निखट्टू हैं जिन्हें रोज़ काम दिया जाता है। कुछ मशीनें भी बन्द रहती हैं इससे काम नहीं मिलता। हम अपनी यही तक़लीफ़ सुनाने आपके पास आये हैं। रामदेव के इन सब शिकायतों को का० नूर इलाही ने सभा के शिकायतों के रजिस्टर पर दर्ज कर लिया। और फिर मज़दूरों से पूछा कि क्या वजह है कि मशीनें बन्द कर दी गई हैं। रामदेव उठकर कहने लगा कि तरासन में एक मशीन की मरम्मत हो रही है जिससे साल खाते (बुन्ते) में बाविन (wift) पूरा नहीं होता यही वजह है। का० नूर इलाही ने इस बात को भी लिख लिया।"

तुरन्त का० गोपाल खण्डकर सब मज़दूरों को साथ लेकर मिल में वीविंग मास्टर के पास गये। का० गोपाल खण्डकर ने वीविंग मास्टर से कहा कि "साहब आज आपके मिल साल खाते के मज़दूरों की शिकायत आई है कि कुछ बदली वालों को रोज़ काम मिलता है और कुछ बदली

वालों को महीने में ६, ८, १० दिन। यह कैसा इंसाफ़ है? मेरा कहना है कि हर बदली वाले मज़दूरों को नम्बरवार काम मिलना चाहिये। यह तो आपको भी पसंद होगा।

वीविंग मास्टर—"हाँ, हाँ, हमें तो अभी तक मालूम ही नहीं था। कामरेड आप ठीक कह रहे हैं। इसके बाद वीविंग मास्टर ने अरदली के ज़रिये हेड जाबर घमण्डीसिंह को बुलाया और कहने लगा क्या वजह है कि कुछ बदली वालों को रोज़ काम मिलता है और कुछ को महीने में ६, ८, १० दिन। कल से हर बदली वाले मज़दूरों को नम्बरवार काम मिलना चाहिये।"

घमण्डीसिंह—'साहब तरासन की एक मशीन बन्द है जिससे बाविन पूरा नहीं होता है। इसी वजह से बदली वालों को बराबर काम नहीं मिलता।"

रामदेव—"साहब, ये मास्टर घमण्डीसिंह झूठ बोलते हैं। इनके मसका पालिस लगाने वाले और इनके रिश्तेदारों को बराबर रोज काम मिलता है और हम लोगों को महीने में ६, ८, १० दिन।"

वीविंग मास्टर—"अच्छा तुम लोग आज घर जाओ। कल से नम्बरवार काम मिलेगा। कामरेड गोपाल खण्डकर रामदेव और सब साथियों को लेकर मिल के फाटक के बाहर आये और मज़दूरों से कहा कि आज आप लोग घर जाइये। कल काम मिलने पर भी, न मिलने पर भी सभा में खबर दीजियेगा और मैं तरासन की बन्द मशीन के बाबत स्पिनिंग मास्टर से मिलने जा रहा हूँ।"

का० गोपाल खण्डकर स्पिनिंग मास्टर के आफ़िस में गये। और मशीन के बन्द होने के बाबत बताया कि ३०, ४० मज़दूर रोज़ काम से वापस जा रहे हैं। स्पिनिंग मास्टर ने कहा, "जनाब इसमें तो कम्पनी का भी हरजा होता है। सिर्फ़ दो दिन और बन्द रहेगा।'

बाद में कामरेड गोपाल खण्डकर मजदूर सभा आफ़िस गये। आफ़िस में कामरेड नूर इलाही ने हाथ से पोस्टर सालाना बोनस के

बातन लिखकर दोनों साथी मज़दूर बस्तियों में लोकयुद्ध अख़बार और जन-प्रकाशन गृह की किताबें मज़दूरों को देने गये।

रामदेव घर गया। रधिया ने कहा, "जाओ लाला गिरधारी मल के यहाँ से सामान ले आओ।" रामदेव वहाँ से उठ कर लाला गिरधारी मल के दुकान पर पहुँचा ही था कि लाला गिरधारी मल कहने लगा—

"रामदेव तुम्हारा ३ माह का हिसाब आज किया है। सब ५० रुपया सवा दो आना हिसाब निकला है।"

रामदेव—"लाला जी इतना रुपया कहाँ से हो गया, हर महीने पन्द्रह रुपया देता चला आया जब भी पचास रुपया बाक़ी लगा दिया।"

गिरधारी मल—"रामदेव सुन, कभी तू ले गया, कभी तेरी रधिया ले गई, माल भी तो चोखा खाये हो ना।"

रामदेव—"क्या ख़ाक चोखा माल खाये हैं। सड़ी हुई ज्वार और टूटे हुये चावल, यही चोखा माल है।"

लाला गिरधारी मल—"हाँ, हाँ, यही चोखा माल है। इस लड़ाई में सरकार सारा अन्न फ़ौज के लिये खरीद रही है। दो महीने बाद यह भी नहीं मिलेगा। मालूम है, खाने बग़ैर आदमी बंगाल में मर रहे हैं। हमारा बाक़ी रुपया जल्दी जमा करो, हमको ग़ल्ला ख़रीदना है।"

रामदेव—"लाला जी, अभी कहाँ से रुपया मिलेगा। थोड़ा-थोड़ा करके चार पगार (तनख़ाह) में चुकता कर देंगे। मिल में मुस्तकिल काम मिलता ही नहीं। अगर बराबर काम मिलता तो लाला जी, तुम्हारा बाक़ी क्यों पड़ता?"

लाला गिरधारी मल—"हम तुम्हारे काम-धाम के ज़िम्मेदार नहीं हैं, हमें तो रुपया चाहिये, रुपया। और सुनो, अब फ़ी रुपया एक आना ब्याज देना होगा, समझे। इस काग़ज़ पर अँगूठा लगा दो।"

रामदेव—"यह कैसा काग़ज़ है?"

लाला गिरधारी मल—"यही उधारीखाता का काग़ज़ है। अँगूठा इधर लाओ।"

रामदेव हाथ बढ़ाकर अँगूठे की टीप कागज़ पर लगा कर कहने लगा—"लाला जी, दो रुपये की बजड़ी और दे दो। अब सिर्फ़ २४ घंटे में एक दफ़े खायेंगे। क्योंकि जोर-बटोर के तुम्हारा पैसा देना है।"

गिरधारी मल—"जब तक मूल रुपया और व्याज नहीं दे दोगे तब तक एक पैसे का भी जिन्स नहीं देंगे।

रामदेव—"नहीं लाला जी ऐसे बेमुरौव्वत मत हो, मैं तो तुम्हारे पुराने ग्राहकों में एक ग्राहक हूँ।"

गिरधारी मल—"बस, चले जाओ! और रुपये के मुँह मत दिखाना।"

रामदेव वहाँ से निराश होकर घर आया। उसकी दुनिया अँधेरी दिखाई देती थी। पति को दुःखी देखकर रधिया व्याकुल हो उनके दुःख को जानना चाहती थी। लेकिन रामदेव अँधेरी रात में भटक रहा था। उसे कोई रास्ता नहीं मिलता था।

रधिया—"आप क्यों नहीं बोलते? क्या हो गया?"

रामदेव बच्चों की तरफ़ देखता हुआ चुप था।

रधिया—"क्यों नहीं बोलते! दूकान से सामान लाने में क्या हुआ!"

रामदेव (दुःख से) "लाला ने हिसाब किया है, सब ५० रुपया सवा दो आना बाक़ी निकाला है। एक आना व्याज फ़ी रुपया देना होगा। और इसके लिये कागज़ भी लिखा लिया है। हमने सामान के लिये बहुत कोशिश किया लेकिन वह नहीं दे रहा है। वह कह रहा है कि जब तक मूलधन नहीं जमा करोगे एक पैसे का भी जिन्स नहीं देंगे।"

रधिया—"हर महीने पन्द्रह रुपया दिया गया जब भी ये पचास रुपया कहाँ से हो गया, लाला ने बेईमानी की है।"

रामदेव—"अगर उधार न खाते तो वह कैसे बेईमानी करता।"

रधिया अपने लड़के सुखई को साथ लेकर सड़क पर बैलगाड़ियों के बैलों का, घोड़ागाड़ियों के घोड़ों का लीद-गोबर माँ-बेटे दौड़ धूपके आँटा माड़ने वाले लोहे के तसला में बीन-बटोर कर घर ले आया करते

थे। और अपने कोठरी के बग़ल गली में लीद-गोबर पाथ दिया करते थे। इस तरह से अपने घर में चूल्हा में जलाने के लिये ६ टोकरा कण्डा (गोइठा) जमा कर लिया था।

लाला गिरधारीमल के दुकान की उधारी बन्द हो जाने से रामदेव-रधिया बेहाल थे।

रधिया—"हम तुम तो दो-चार दिन बग़ैर अन्न के ज़िन्दा रह सकते हैं। लेकिन इन बच्चों के लिये क्या किया जावे। बच्चे तो बग़ैर दिन में दो दफ़े खाये ज़िन्दा नहीं रह सकते, दो दफ़े को कौन कहे घर में तो अन्न का दाना भी नहीं, कोई ऐसी चीज़ है भी नहीं जिसे बेचकर बच्चों का पेट भर सकूँ। क्या किया जाय जब दस वर्ष का उधारी खाता वाले बनिया ने उधारी खाता बन्द कर दिया तो कौन देगा? अभी तुम्हारे तनख़ाह मिलने को दस रोज़ हैं। जाओ, आज फिर जाओ?"

रामदेव—"कहाँ?"

रधिया—"लाला गिरधारी मल के यहाँ जाकर आज फिर कहो कि लाला जी हमारे घर में खाने को कुछ नहीं है। हमारे नन्हे-नन्हे बच्चे भूखे हैं। भूखे बच्चों पर ज़रूर ख्याल करेगा, उसके भी तो बच्चे हैं।"

रामदेव—"वह नहीं देगा। वह मुनाफ़ाखोर, ब्याजख़ोर है।"

रधिया—"वह क्यों नहीं देगा? क्या हम मुफ़्त माँग रहे हैं। जैसे उसका दस वर्ष उधारी खा के पैसे के माल के लिये तीन पैसे दिया, रुपये के माल को तीन रुपया दिया उसी तरह से यह बाक़ी रुपया आहिस्ते-आहिस्ते चुकता कर दिया जायेगा। अगर तुम नहीं जा सकते हो तो मैं जाने के लिये तैयार हूँ। तुम्हारी क्या राय है।"

रामदेव—"जाने के लिये मैं नहीं रोकता लेकिन जहाँ तक मुझे उम्मेद है वह नहीं देगा।"

रधिया बच्चे को गोद में लेकर लाला गिरधारी मल के दुकान पर पहुँची ही थी कि गिरधारी मल ने पूछा—"क्यों रधिया, कैसे आई?"

रधिया—"लाला जी आज हमारे घर में कुछ नहीं है। हमारे नन्हे-नन्हे बच्चे भूख से तड़फ रहे हैं। चार आने का आटा दे दो लाला जी जिससे मैं अपने बच्चों को ज़िन्दा रख सकूँ।"

गिरधारी मल—"अरे वाह रे? नन्हे बच्चों वाली! पचास रुपया खा लिया अब और उधारी माँगने आई है। पहले रुपया और ब्याज चुकता कर दे। फिर ज़बान चलाना। सब दुकानदार दो आना चार आना फ़ी रुपया ब्याज लेते हैं। मैंने तुझे ग़रीब समझ के एक आना फ़ी रुपया ब्याज रक्खा जब भी अभी तक कुछ भी नहीं दिया।"

रधिया—"लाला जी जैसे दस वर्ष उधारी खा के पैसा-पैसा तक दे डाला उसी तरह से यह भी दे दूँगी। आज तीन दिन से हमारे घर में कुछ खाने को नहीं है। बच्चे भूखे हैं लाला जी सिर्फ़ दो आने का आँटा ज़रूर दे दो!"

गिरधारी मल—"रधिया ग़ुस्सा मत लगा। यहाँ से चली जा। दो आना तो बहुत है कानी कौड़ी बराबर आटा नहीं दूँगा। और रमदेउवा से कह देना कि तनखाह पाते ही रुपया दे जावे।"

रधिया दुःखी और उदास हो आहिस्ते-आहिस्ते घर वापस लौटी। वह शोक सागर में डूबती-उतराती थी। पतवार का पता नहीं पाती थी। माँ को आते देख बच्चे रोते हुये माँ भूख लगी है, माँ! कुछ खाने को ला माँ!

रामदेव—"क्या हुआ।"

रधिया—"नहीं! कुछ नहीं दिया। बच्चे दिन भर के भूखे हैं। रो रहे हैं। क्या खिलाऊँ इन्हें! जलाने के लिये कण्डा (गोइठी) है उसे बेच लाऊँ?"

रामदेव—"जाओ ज़रूर जाओ? हमारे-तुम्हारे इस अँधेरी नगरी में सिर्फ़ यही बच्चे ही उजाले के चिराग़ हैं। इन्हें ज़िन्दा रखना हमारा-तुम्हारा कर्त्तव्य है।"

रधिया कण्डे से भरी हुई खैंची सर पर रख के शहर के एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में, दूसरे से तीसरे मुहल्ले में घूमती रही।

दुकानदार—"अरे कण्डेवाली कितना पैसा लेगी।"

रधिया—"मैं ग़रीब हूँ, मेरे बच्चे तीन दिन से भूखे हैं। आपकी जो ख़ुशी हो वह दे दो।"

दुकानदार—"अच्छा गिरा दे, गिरा दे, आठ आना पैसा मिलेगा।"

रधिया—"नहीं लाला जी कुछ और दो, यह हमारे एक हफ़्ते की कमाई है।"

दुकानदार—"साढ़े आठ आने में देना है तो गिरा दे, ज्यादा नहीं मिलेगा।"

रधिया सर पर कण्डे की खैंची लिये हुये गरुवाई से तनमना रही थी। उसका आगा-पीछा अँधेरा था। उसने कहा—"लाला जी बहुत कम पैसा दे रहे हो।"

दुकानदार—"मैं तुझे ग़रीब समझ के साढ़े आठ आना दे रहा हूँ, दूसरे दुकानदार तो चवन्नी देंगे चवन्नी।"

रधिया मजबूर होकर लाला जी के आँगन में कण्डा गिरा के साढ़े आठ आना पैसा लेकर आटा के दुकान पर जा पहुँची। हाथ ही में पैसा रधिया लिये हुये दुकान के नीचे खड़ी थी। हाथ से एक चवन्नी निकाल के दुकानदार को दिया कि मुझे चार आने का आटा दे दो।

दुकानदार ने चवन्नी वापस करते हुये कहा "यह तो गिलट की चवन्नी है, कहाँ से लाई? क्या शहर भर में हमी को ठगने को रहा?"

रधिया—"लाला जी मैं आपको ठगने नहीं आई हूँ, अभी साढ़े आठ आने पैसे का कण्डे बेच के लाई हूँ।"

दुकानदार—"कहाँ बेचा है? उसने ठग लिया।"

रधिया वापस उसी दुकान पर चली जहाँ उसने कण्डे बेचे थे। लाला जी, देखो यह चवन्नी तुमने गिलट की दी है। आटा लेने गई थी, दुकानदार यह चवन्नी नहीं लेता है।

दुकानदार—"यह चवन्नी हमारे दुकान की नहीं है। हमें ठगने आई है, चली जा यहाँ से।"

रधिया—"लाला जी अभी साढ़े आठ आने के कण्डे तुम्हारे दुकान पर बेच के गई हूँ। और पैसे तो मेरे पास थे ही नहीं। मैं कैसे ठगती हूँ ?"

दुकानदार—"चली जा, चली जा, हरामजादी कहीं की, न जाने कहाँ से खोटी चवन्नी लाई और हमारे गले पड़ने आई।"

रधिया—"रोती हुई फिर उसी आटे की दुकान पर गई, दूसरी चवन्नी देकर आटा लेकर घर गई, माँ को आते देख बच्चे रोने लगे। माँ! भूख लगी है माँ! कुछ खाने को लाई है माँ!"

रधिया—"हाँ बच्चे, आँटा लाई हूँ। अभी जल्दी रोटी पकाती हूँ लाल, रोओ मत।"

रामदेव—"कितना पैसा मिला।"

रधिया—"साढ़े आठ आना मिला था जिसमें दुकान वाले ने एक चवन्नी गिलट का दिया है, वह आटा वाले ने नहीं लिया। मैं फिर वापस कण्डे वाले के दुकान पर गई लेकिन उसने चवन्नी बदलने के वजाय हमी को ठगी बताया।"

रामदेव—"यह दुकान वाले मुनाफ़ेबाज़ और पक्के चोर, बेईमान होते हैं।"

रधिया जल्दी चूल्हा जला के चार टिक्कड़ सेंक बच्चों को निमक के साथ खिलाने लगी। पहिले भुखई तोखई को खिला कर फिर बुखार ही में सुखई को गोद में लेकर दो-चार कौर खिला गुदरी पर लेटा दिया।

एक रोटी में रामदेव-रधिया दोनों आधा-आधा खाकर पानी पी लिया, बाकी रोटियाँ रधिया ने बच्चों के लिये ढाँक के रख दिया। सुखई को रात भर बुखार चढ़ा रहा। सबेरे भी बुखार उतरा नहीं था। लेकिन रासदेव को जीविका के लिये मजबूरन काम पर जाना पड़ा।

रामदेव मिल के फाटक पर पहुँचा ही था कि देखा सैकड़ों मजदूर

मिल के गेट के पास लगे हुये पोस्टर को पढ़ रहे थे। एक मज़दूर ज़ोरों से पढ़ रहा था।

सालाना बौनस चार महीने का हासिल करेंगे ज़रूर

मज़दूर भाइयो ! आज इस जनयुद्ध में हम मज़दूर देश के नंगी-भूखी जनता के तन ढाकने और सस्ता कपड़ा देने के लिये पैदावार बढ़ा रहे हैं।

आज कपड़ा दुकानों पर इतना महँगा है कि आज के दो वर्ष पहले जिस धोती जोड़े की कीमत ४ रुपया थी, आज उस धोती जोड़े की कीमत १६, २० रुपया है। ऐसे हालत में साफ़ ज़ाहिर होता है कि मिल-मालिकों का काफ़ी मुनाफा हो रहा है। सालाना बौनस के बावत आल इंडिया ट्रेड यूनियन, सरकार और मिल-मालिकों के नुमाइन्दों ने फ़ैसला कर दिया है कि हर जगह चीज़ों के दाम आसमान पर चढ़ गये हैं और मिल मालिकों को काफ़ी मुनाफ़ा हो रहा है। इसलिये मज़दूरों को सालाना बौनस मिलना चाहिये।

साथियो ! हम मज़दूरों को मिल चालू रख कर बौनस नक़द और चार माह की हासिल करना है। इसलिये हर मज़दूर भाई को आनेवाले १० ता० को सभा का मेम्बर ज़्यादा से ज़्यादा बनना चाहिये। हम सब मज़दूर सब के सब अगर सभा के मेम्बर बन जाते हैं तो मिल-मालिक या सरकार हमारी माँग नहीं ठुकरा सकती, इसलिये मज़दूर सभा के मेम्बर हज़ारों की तादाद में बनो।

रामदेव पोस्टर में लिखी हुई सारी बातें सुनकर मिल के अन्दर अपने खाता में पहुँचा। लाइन जाबर नं० ४ का डबल पेटो के साँचे पर उसे पन्द्रह दिन की बदली दिया।

रामदेव साँचा चला रहा था।

घमण्डीसिंह रामदेव पर खार खाया हुआ था, वह रामदेव के साँचे से उतरे हुये कपड़ों को घड़ी खाता में देख रहा था, दो तार एक हाथ लम्बा चला हुआ था। तुरन्त रामदेव को मास्टर घमण्डीसिंह ने

कटलूकर के ज़रिये बुलवाया और कहा—"यह नुक़सानी क्यों चलाया ? जाओ तुम्हारा जवाब है।" वीविंग क्लर्क (क्लर्क) से हिसाब लिखा के वह फिर बोला, "तुम्हारे ऐसे मज़दूर कम्पनी को नहीं चाहिये।"

रामदेव—"मास्टर जी, नुक़सानी तो हर कारीगर से चल जाती है। और फिर यह तो कोई नुक़सानी में नुक़सानी नहीं है। सिर्फ़ दो तार टूटा है।"

घमण्डीसिंह—"हम एक तार भी लम्बा चला हुआ माल नहीं लेंगे। जाओ अब बात मत करो। तुम्हारा तो हिसाब लिख दिया।"

रामदेव निराश होकर घड़ी खाते से साल खाते (बुन्ते) में होकर अभी साल खाते के दरवाज़े पर पहुँचा था कि मियाँ नूरे ने पूछा, "भाई रामदेव क्या हुआ ?"

रामदेव—"साथी क्या बतावें। मास्टर घमण्डीसिंह ने सिर्फ़ दो तार नुक़सानी पर जवाब दे दिया।" कह कर वह आगे बढ़ा ही था कि नूरे ने साँचा-साँचा प्रचार करके बताया कि रामदेव को जवाब हो गया है। हड़ताल करो। बाद में क़रीब १० ही मिनट में साल खाते में हड़ताल हो गई। साल खाते के हड़ताली मजदूर, तरासन, हवादार इत्यादि ने खातों में हुल्लड़ कर दिया और आध घण्टे में सारी मिल बन्द हो गई। थोड़ी देर में सब मजदूर मिल के अन्दर ही रामदेव के पास खड़े थे। मियाँ नूरे नारे लगा रहे थे।"

बाद में रामदेव ने मज़दूर सभा के पोस्टर पर ख्याल किया और दीवार पर खड़ा होकर कहने लगा—

"मजदूर साथियो ! आज आप सब साथियों ने ऐसे नाजुक वक्त पर हड़ताल कर दिया है। बंगाल में अन्न-कपड़े से तंग होकर सैकड़ों ग़रीब लोग रोज़ मर रहे हैं। आज दुनिया में सिर्फ़ हमी मज़दूरों की ज़िम्मेदारी देश-रक्षा की है। आज हम मज़दूरवर्ग-किसानवर्ग कपड़ा-अन्न ज्यादा पैदा करके देश की हिफ़ाजत और देश का बचाव कर सकते हैं। इसलिये मेरा आप से निवेदन है कि अगर देश की रक्षा

आपको करनी है, बंगाल के मरते हुये ग़रीब भाइयों को बचाना है तो आप लोग अभी अपने-अपने कामों पर चले जाओ। मैं इस वक़्त किसी दूसरे मिल में काम कर लूँगा। लेकिन हड़ताल नहीं होनी चाहिये।"

रामदेव की तक़रीर सुन कर सारे हड़ताली मज़दूर काम पर चले गये।

मिल चालू करा कर रामदेव घर पहुँचा ही था कि रधिया मरे हुये सुखई को गोद में लिये रो रही थी। रामदेव मरे हुये लड़के को देख कर दिवाना, बावला-सा हो गया। पड़ोस वालों ने सुखई की मृत शरीर को उठा कर शहर के दक्खिन तरफ़ नहर में गाड़ दिया।

रधिया हाय सुखई! हाय सुखई! करते महीनों रोती रही, वही हाल रामदेव का भी था।

रामदेव को चारों तरफ़ से मुसीबत ने आ घेरा था। नौकरी का छूट जाना, सुखई का मर जाना उसके दिल पर ज़बर्दस्त धक्का लगा और वह बीमार हो गया। उसी वक़्त, ता० १० का पगार का दिन आया। रधिया रामदेव को साथ लेकर आहिस्ते-आहिस्ते चल कर मिल में से २५ रुपया तनखाह ले आई।

इधर उसके घर पर मकान-मालिक लूटन मल और दुकानदार लाला गिरधारी मल बैठे हुये रामदेव का रास्ता देख रहे थे। रधिया ने रामदेव को घर में लेटा के लाला लूटन मल (मकान मालिक) को पाँच रुपया दिया और हाथ जोड़कर कहा, "लाला जी बाक़ी भाड़े का पैसा आहिस्ते-आहिस्ते चुकता कर देंगे।"

और फिर पाँच रुपया लाला गिरधारी मल (दुकानदार) को दिया।

लूटन मल—"हमारे मकान का भाड़ा चार माह का १२ रुपया चढ़ गया है। ये पाँच रुपल्ली से क्या होगा ?"

रधिया—(रोती हुई) "लाला जी अभी छः दिन हुये बड़ा लड़का मर गया है। वे बीमार हैं और घर में खाने को कुछ नहीं है। नन्हें-नन्हें

बच्चे भूख से तड़फ रहे हैं। अगले माह में कुछ भाड़े का रुपया और देंगे, लाला जी।"

लूटन मल—"बीमार हो जाना, मर जाना यह तो दुनिया का कारोबार है। भगवान् की मरजी है। हमें तो मकान का भाड़ा, रुपया चाहिये रुपया।"

रधिया—"लाला जी यही १५ रुपया महीने भर का खर्चा है। वे बीमार हैं, कुछ दवाई में भी खर्च होगा। अगले माह में कुछ रुपया और देंगे लाला जी।"

लूटन मल—"मकान का भाड़ा चुकता करो! नहीं तो मकान खाली करना होगा! मैं कोई बात सुनने के लिये तैय्यार नहीं।"

रधिया रोती हुई रामदेव के पास गई। लेकिन रामदेव तो बुखार से बेहोश पड़ा था। रधिया ने पाँच रुपया लाला लूटन मल को और दे दिया।

लूटन मल—"देख रधिया! अभी पिछले महीने का २ रुपया बाक़ी है, अगले महीने में इसे भी दे देना। लूटन मल १० रुपया लेकर अपने घर गया और बैठे हुये लाला गिरधारी मल ने कहा—रधिया ५० रुपये में ५ रुपया दिया, तेरे को शर्म नहीं लगी। अच्छा १५ रुपया और ला!"

रधिया—"लाला जी हमारे घर में खाने को अन्न नहीं है। वे बीमार पड़े हैं। बच्चे भूख से तड़फ रहे हैं। महीना भर खर्चा के लिये यही दस रुपया है। अगले महीने में भी कुछ रुपया देंगे लाला जी।"

लाला गिरधारी मल—"अच्छा १५ नहीं तो १० रुपया ला।"

रधिया—"लाला जी यही तो दस रुपया घर भर के जिन्दगी का सहारा है।"

लाला गिरधारी मल—"अच्छा १० नहीं तो ७ रुपया ला अब बग़ैर सात रुपया के नहीं जाने का।"

रधिया (शोक में)—"लो लाला जी ७ रुपया।"

गिरधारी मल १२ रुपया लेकर घर गया। रधिया रामदेव को दवा पिला रही थी। दरवाज़े पर सफ़ेद मिरजई कुर्ता पहिने, सर पर पगड़ी बाँधे, मारकीन की धोती और पाँव में देशी जूता पहने माथे पर टीका तिलक, खारुवाँ का झोला, चावल से भरा हुआ, बग़ल में पत्रों की पोथी (कर्मकाण्ड) दबाये हुए पण्डित मल्हार पाण्डे का आगमन हुआ।

पं० मल्हार पाण्डे (लड़कों से)—"जजिमान रामदेव हैं, लड़को।"

पं० मल्हार पाण्डे की बोली सुनते ही रधिया घर से बाहर आई।

रधिया—"पण्डित देवता, पाँवलागी।"

पं० मल्हार पाण्डे—"जै हो लक्ष्मी, जजिमान फ़लो फलो, भगवान तुम्हारी जै जै कार भला करे।"

रधिया—"पंडित देवता आज क़रीब १५ दिन हुये बड़े लड़के को मरे, उसी के शोक में वे भी बीमार हैं।"

पं० मल्हार पाण्डे (पत्रा देखते हुये)—"बड़े लड़के को तो कोई भारी ग्रह नहीं था। लेकिन जजिमान रामदेव को तो शनिश्चर महराज का कोप है। यह बहुत दुष्ट ग्रह है।"

श्री रामचन्द्र जी को १४ वर्ष वन में इसी ने भटकाया था इत्यादि।

रधिया (शोक में)—"पण्डित देवता फिर ये कैसे अच्छे हों ?"

पण्डित मल्हार पाण्डे—"सुनो रधिया, अफ़सोस करने की कोई जरूरत नहीं, ऐसे तो पचासों जजिमान अच्छा किया! शनिश्चर महराज का पूजा दे देने से ग्रह कट जाता है। और तब बीमार आदमी अच्छे हो जाते हैं। यही करते-करते दाढ़ी-मोछ सफ़ेद हो गई।"

रधिया—"पण्डित देवता ग़रीबी माफ़िक पूजा का खर्च कितना लगेगा ?"

पं० मल्हार पाण्डे—"कम से कम ५ रुपया तो जरूर खर्च होगा।"

रधिया—"पण्डित देवता, घर में जायदाद सिर्फ़ तीन रुपया है, जिसमें आठ आना आँटा के लिये रख लेती हूँ, बाक़ी ये दो रुपया आठ आना लो, पण्डित देवता पूजा का सामान ले आओ!"

पण्डित मल्हार पाण्डे १० मिनट में पास के दुकान से शनिश्चर के पूजा का सामान ले आये।

रधिया ने जल से पण्डित देवता का चरण धोकर घर के अन्दर रामदेव के पास बैठा दिया। उसके बाद पण्डित मल्हार पाण्डे लोहे के तपले में पूजा की सामग्री रखने लगे। १—तिल काली दो आना, २—तेल कड़वा आठ आना, ३—काला कपड़ा आठ आना, ४—काला धागा एक आना, ५—काली दूब, ६—काली गाय का गोबर, ७—ताँबे का पैसा नौ टका, ८—ब्राह्मण का भोजन पाँच आना, ९—काला अन्न छः आना, १०—काली बछिया का दान सवा पाँच आना, ११—पान एक पैसा। सब मिज़ान ढाई रुपया। उसके बाद मल्हार पाण्डे १० मिनट तक शनिश्चर देव की पूजा-पाठ करके थोड़ा-सा काला धागा निकाल कर रामदेव के दाहिने हाथ में बाँध कर फिर दोनों बच्चों के हाथ में बाँध कर आशीर्वाद देते हुये कहने लगे।

"रधिया बाई, पूजा कराई जो कुछ हो सकेगा वह हमें तनखाह पर दे देना।"

मल्हार पाण्डे हाथ से सब पूजा की सामग्री समेट के खारुवाँ के झोले में भर रहे हैं। और मुँह से—आशीर्वाद देते हुए—जै हो रामदेव जजिमान की, भगवान जल्द अच्छा करो, भगवान धन-पुत्र से बढ़ती करो। घबड़ाना मत रधिया बाई, जजिमान रामदेव का क्लेश ३ दिन में कट जायगा।

रधिया—"पण्डित देवता के चरण पर माथा दे कर पड़ गई।"

मल्हार पाण्डे—"जै हो लक्ष्मी, घबड़ाना मत, जजिमान बहुत जल्द अच्छा होंगे।"

पण्डित मल्हार पाण्डे कंधे पर सामान, सामग्री भरी हुई खारुवाँ का झोला, बग़ल में पोथी (कर्मकाण्ड-पत्रा) और हाथ में तेल भरी हुई मटकी लेकर आशीर्वाद देते हुये चले गये।

रधिया दिल में सोच रही थी कि अब जल्द अच्छे हो जायँगे। लेकिन रामदेव दिन-ब-दिन कमज़ोर होता गया।

रधिया रामदेव का चेहरा देख कर निराशा से चिन्तित थी। उसकी दुनिया जलती थी। दवा, पथ्यहीन रामदेव के शरीर में हड्डी की ठठरी नज़र आती थी। चेहरा कुरूप-सा हो गया था, आँखें बैठ गईं थीं और दो दिन के बाद रामदेव के प्राण पखेरू उड़ गये। रधिया सर पटक-पटक कर रो रही थी। मुहल्ला वालों ने आकर बग़ैर क़फ़न के गुदरी में लपेट के बग़ैर जलाये नदी में परवाह दी।

रामदेव के मरने के बाद रधिया दुखई, तोखई का मुह देखकर शत्र करती थी। वह अपना और दोनों बच्चों की जीविका चलाने के लिये भट्ठों में दिन भर ईंटें उठाने की मजूरी में ६ आना ले आती थी।

रामदेव के मर जाने की खबर लाला गिरधारी मल को लगी तो वह सीधे रधिया के पास पहुँचे।

गिरधारी मल—"रधिया, रामदेव तो मर गया, लेकिन रुपया कौन देगा ?"

रधिया—"रुपया मैं दूँगी लाला जी !"

गिरधारी मल—"तू कहाँ से लाके देगी, कहीं नौकरी भी तो नहीं करती। मूल को कौन कहे अभी तो एक पैसा भी ब्याज नहीं दिया।"

रधिया—"लाला जी ब्याज छोड़ दो, मैं मजूरी करके तुम्हारा ५० रुपया आहिस्ते-आहिस्ते जमा कर दूँगी !"

गिरधारी मल—"बस चुप रह, अगर यह ५० रुपया आज मेरे पास होता तो इस महँगी बिक्री में ५०० रुपया बना लेता। मेरे रुपये जमा करने की जल्द फ़िक्र कर।"

रधिया—"अच्छा जाओ लाला जी दो आना रोज़ देती रहूँगी।"

गिरधारी मल अपने दुकान पर गया और रधिया घर पर बच्चों को छोड़ कर मजूरी को गई। शाम को जब वह मजूरी करके लौटी तो घर के अन्दर भुखई बुख़ार से जल रहा था। रधिया भुखई को गोद में ले के बैठी ही थी कि मकान मालिक आ गया।

लूटन मल—"रधिया, रामदेव तो मर गया अब मकान का भाड़ा कैसे देगी ?"

रधिया—"लाला जी मैं ६ आना रोज़ की मजूरी करती हूँ बचा-खुचा के आप का भाड़ा देती रहूँगी।"

लाला लूटन मल—"७ रुपया भाड़ा चढ़ गया, मुझे तुम्हारे रुपये की ज़रूरत नहीं मकान खाली कर दो।"

रधिया—"ये छोटे-छोटे बच्चों को कहाँ ले के जाऊँ लाला जी। आहिस्ते-आहिस्ते भाड़ा देती रहूँगी।"

लूटन मल—"कहीं भी जाओ! क्या मैंने तुम्हारा ठीका ले रखा है।

रधिया—"लाला जी, एक बच्चे को बुखार चढ़ा है, कल आपका मकान खाली कर दूँगी।"

लूटन मल—"रधिया, ज़्यादा बातें मत बना, मकान अभी खाली कर दे! नहीं तो मेहतर बुलवा के कथरी-गुदरी फिकवा दूँगा।"

रधिया रोती हुई टीन की फूटी बालटी में तावा, करछुल और टीन के ६ बर्तन, लोहे का एक तसला और दो कथरी की गठरी बाँध के सर पर रख के बुखार चढ़े हुये बच्चे को गोद में लेके, दूसरे बच्चे को साथ में लेकर लाला गिरधारी मल के दुकान के पास जा बैठी।

गिरधारी मल—"रधिया ये अटला-खुटला लेके यहाँ कैसे आई?"

रधिया—"लाला लूटनमल ने घर से निकाल दिया है लाला जी।"

गिरधारी मल—"निकालें नहीं तो क्या करें मुफ़्त का मकान नहीं मिलता। मैं संतोषी हूँ। अगर दूसरे महाजन का ५० रुपया होता तो तुझे बेचवा लेता।"

रधिया—"लाला जी रहने को जगह दे दो, बच्चे को बुखार चढ़ा है।"

गिरधारी मल—"हमारे पास कोई जगह नहीं है, उठाओ यहाँ से अटला-खुटला।"

रधिया वहाँ अटला-खुटला उठा कर रेलवे लाइन पुल के नीचे जा ठहरी, गठरी खोलके गुदरी ज़मीन में बिछाकर बुखार चढ़े हुये मुखई को लेटा दिया और वह ठगमारी-सी बैठी थी कि तोखई ने कहा—माँ, भूख लगी है, कुछ खाने को दो माँ!

रधिया—"भैय्या तोखई मुखई के पास बैठो ! मैं दुकान से आँटा ले आऊँ।"

रधिया दस मिनट में चार आने का आटा लेकर रोटी पकाकर तोखई को खिला रही थी कि मुखई एक-दो हुचकी लगाते हुये चल बसा। रधिया रोती कलपती हुई मुखई के लाश को नदी में फेंक आई।

रधिया रात-दिन रोते-रोते दुबली हो कर कमर की टेढ़ी हो गई थी, लेकिन सामने जब तोखई को देख लेती थी तो दिल की जलन कुछ कम हो जाती थी। अन्त में तोखई को भी बुखार ने पछाड़ा और मुखई के मरने के पन्द्रह दिन बाद तोखई ने भी पलकें नीची कर उसका साथ दिया।

रधिया पगली-बावली होकर भारत के राजधानी देहली के घण्टा-घर के फुट-पाइलियों पर सैकड़ों नंगे-अपंग कंगालों के दल में फिरती होगी।

J. Mrs.
I want to love
You are You Ready.
Thank You

६

चार मज़दूर और नेता गुलछर्रे मल

चार मज़दूर—१—घिसियावन, २—बदरुद्दीन, ३—मोल्हू, ४—चेतनसिंह—मिल की छुट्टी इतवार के दिन २ बजे दिन में घर के पास सड़क के किनारे दस क़दम आगे नीम के पेड़ के नीचे चौतरे पर बैठे हुये मज़दूर सभा के काम के बाबत् नुक़्ताचीनी कर रहे थे। उसके बाद मोल्हू ने कहा आओ, साथियों ज़रा ताश खेल लें। घिसियावन और बदरुद्दीन ने ताईद की और ताश खेलना शुरू हो गया। ताश बदरुद्दीन ने फेंटा और मोल्हू ने काट दिया। फिर बदरुद्दीन ने ताश बाँटना शुरू किया, घिसियावन सिगरेट का दम लगा रहा था। चेतनसिंह चूना-तमाखू गदोरी में अँगूठे से मसल रहा था। ताश की दो बाँट हो चुकी थी कि मोल्हू ने कहा कि चेतनसिंह तमाखू अभी नहीं तैय्यार हुई। चेतनसिंह ने हाथ बढ़ाकर मोल्हू को तमाखू देकर खुद भी खा लिया।

बदरुद्दीन भी सिगरेट का दम लगा रहा था कि एक सफ़ेदपोश स्वच्छ नर्मा की कती-बुनी स्वदेशी ठाट, आँख चश्मा लगाये हुये, पाँव में चप्पल पहने सड़क पर साइकिल से उतरा। साइकिल से उतरते ही उसने नाक के बग़ल आँख और आँख के बग़ल कान पर हाथ लगाते हुये, सफ़ेदपोशी रुमाल से चश्मा सफ़ा करते हुये ठठा के कहने लगा—अरे! घिसियावन भाई, तुम लोग तो रोज़ ताश खेलते हो।

घिसियावन—"कहो नेता गुलछर्रे मल कहाँ चले!"

नेता गुलछर्रे मल—"मज़दूर बस्तियों में आये हैं।"

घिसियावन—"कहो! आजकल तुम्हारे मिल मज़दूर संघ के सदर कौन हैं!"

नेता गुलछर्रे मल—"हमी सदर हैं भाई घिसियावन। दिन-ब-दिन

ये लाल झण्डे वाले युनियन (मज़दूर सभा) की ताक़त बढ़ती जाती है। बड़ी-छोटी मीटिंगों में सभा वाले कम्यूनिस्ट कहते हैं कि मिल-मालिक, कारखानेदार मज़दूरों के मेहनत से ज्यादा से ज्यादा मुनाफ़ा करते हैं और मज़दूरों को ज़िन्दा रखने के लिए कुछ टुकड़े डालते रहते हैं। जिससे वह ज़िन्दा रह कर काम कर सकें। भैय्या घिसियावन इन कम्यूनिस्टों की बात सुन कर दिल जल जाता है। यही नहीं ये लोग कहते हैं कि मिल-मालिक (कारखानेदार) मज़दूरों का ख़ून चूसते हैं। इन लोगों की बात सुन कर हमारा दिल आकाश में चला जाता है। जब तुम लोग दिहातों से मजूरी करने शहरों में आते हो तो मिल-मालिक कारखानेदार तुम लोगों को नौकरी देता है। तुम सब मज़दूर ख़ुद खाते हो, बीबियों बच्चों को खिलाते हो। मशीन उसकी, ज़मीन मकान उसका, कच्चा माल उसका, तेल, भाप, पानी सब उसी का। मज़दूरों को तो सिर्फ़ मेहनत करना पड़ता है। फिर वह मुनाफ़ाखोर कैसा! ख़ून चूसने वाला कैसा !!

घिसियावन—मज़दूरों की हालत तुम्हें क्या मालूम! तुम्हें तो खाना बढ़िया, कपड़ा स्वच्छ नर्म की सफ़ेदी सब तरह से तुम्हारी पाँचों अँगुली घी में डूबी रहती है। फिर ग़रीब मज़दूरों की ग़रीबी का हाल कैसे मालूम हो! बड़े लाला जी (मिल-मालिक) से भी तुम्हें कम्यूनिस्टों की बातें दुःखदायी लगती होंगी। क्यों न लगे? उसी की चापलूसी से यह सफ़ेद पोशी झलक रही है और नाक के ऊपर दो सै रुपये के चश्मे चमक रहे हैं। हम सब मज़दूरों के कमाई में से काट-कपट के मिल-मालिक तीसरे-चौथे बरस में एक नई मिल और बना लेता है। फिर यह मुनाफ़ाखोरी नहीं तो क्या है! नौ-दस घण्टे मिल के अन्दर एक गर्म कमरे में बन्द रह कर ख़ून-पसीना एक करके कपड़ा पैदा करते हैं। लेकिन उन कपड़ों को पहिनने के लिये हम मज़दूरों को मवस्सर नहीं होता। उसके पहिनने वाले वे स्त्री-पुरुष हैं जिनके हाथ गुलाब जैसे लाल, मक्खन जैसे कोमल, मिल-मालिक, कारखानेदार, सेठ, साहूकार और उनके गुर्गे तुम जैसे लोग हैं।

नेता गुलछर्रे मल—"भाई घिसियावन ज़रा सुनो तो।"

घिसियावन—"बस चुप रहो! मैं तुम्हारी सुधारवादी मिल-मालिक परस्त बोली सुनने को तैयार नहीं। तुम्हारी मिल-संघ में आग लगे।"

नेता गुलछर्रे मल—"भाई नुरुद्दीन ये कम्यूनिस्ट विदेशी लाल झण्डा हिन्दुस्तान में क्यों लहराते हैं?"

नुरुद्दीन—"लाल झण्डे का हाल तुम्हें क्या मालूम! तुम स्वार्थी राष्ट्रवादी हो। तुम अपने भले से भला समझते हो। दिल-दिमाग़ सही करके सुनो! अमेरिका के शहर शिकागो के मिल और कारखाने में काम करने वाले मज़दूरों की हालत एक दम गिरी हुई थी। उन्हें रोज़ १४, १६ घण्टे काम करना पड़ता था और ऊपर से मार-गाली भी दी जाती थी। उनके पेटों में भूख थी, पास में कुछ नहीं था। दौलत से भरी अमेरिका में उन लोगों के पास अपना कह सकने का कुछ नहीं था। दो-दो रोटियों पर पैसे वाले प्रभू उन्हें खरीद लेते थे। उन्हें खरीद कर ऊँची चारमहला वाली डरावनी इमारतों में जिसे मिल-मालिक लोग कहा करते हैं अपना मिल, लेकिन मज़दूर समझा करते हैं अपना स्कूल। इतना तो हर एक देखता है कि उसकी ईटें लाल जैसे किसी के ख़ून से बनी हो। वे मज़दूर मूड़ी लटकाये हुये उसी मिलों में हलाल होने के लिये जाते थे जैसे बेबस भेड़-बकरियाँ कसाईखाने में। दिन बीत जाता था शाम आती है। मेहनत से पस्त लड़खड़ाते पैरों से कुछ पैसा तनखाह लेकर निकलते थे। मिलों के दरवाज़ों पर सफ़ेदपोशी झलकती थी। सूदखोर जितना छीन सका छीन लिये, सूदखोर से छूटा दुकानदार, सरदार, मुक़ादम मास्टर (Jobber) आदि ने पकड़ा। उन्हें भी कुछ भेंट चढ़ानी पड़ी। आगे बढ़ते थे तो मकान-मालिक नोच-खसोट खाया। बचा क्या उन लोगों के पास? घर पर बीवी-बच्चे रास्ता देखते थे। यह थी उनकी मज़दूर जीवनी, ग़रीबी और दर्दों की ज़िन्दा तस्वीर।"

वहाँ के मज़दूरों ने आपस में संगठित हो कर एक्कुम मई सन् १८८६ ई० में मिलों और कारखानों में आम हड़ताल करके अपने

सफ़ेद झण्डे को लहराते हुये शहर शिकागों में बड़ी से बड़ी जलूस निकाले। उनकी मागें यह थी—

१—आठ घण्टे—काम के।

२—आठ घण्टे—नींद के।

३—आठ घण्टे—लिखना-पढ़ना खेल इत्यादि।

उसके बाद उनके नारे थे।

दुनिया भर के मज़दूरो एक हो जाओ ?

उनकी संगठित ताकतों और नारों की आवाज़ से वहाँ के कारखानेदार और सरकार बौखला के घबड़ा उठी। निहत्थे मज़दूरों पर उनकी फौज पुलिस ने गोलियाँ, संगीनें चलाईं। हज़ारों मज़दूर शहीद हुये। उनके ख़ूनों से सड़क लाल हो गई थी। सड़क के किनारे मुहड़ियों से ख़ून बह रहा था। गोलियों के चलने से बहादुर मज़दूर सफ़ेद झण्डा लिये हुये ज़मीन पर शहीद हो गये थे। जिन्दा मज़दूरों ने झण्डे को उठाया तो वह उन शहीदों के ख़ूनों से रँगा लाल झण्डा हुआ। उन शहीदों के लोथों से सड़क भरी थी, माँ, बहू-बेटियाँ वहाँ पर बेहाल खड़ी थीं, लाल-लाल आँखों से लोथों को पहचान रही थीं। मातायें सड़क पर गोद के बच्चों को मुट्ठी बँधवाना सिखाती थीं। इस तरह हज़ारों की तादाद में मज़दूरों ने शहीद होकर अपने क़ौल को पूरा किया। मज़दूरों ने जो माँगें एलान किये थे, सरकार और मालिकों ने हार मान कर माँगें मंजूर किये। इस तरह मज़दूरों की जीत हुई। वह दिन एक्कुम मई मज़दूरों का त्यौहार हुआ और दुनिया के मज़दूरों का झण्डा लाल हुआ। आज तो दुनिया भर के मज़दूर एक्कुम मई को अपना त्योहार मनाते हैं और अपने भाई शहीदों को याद करते हुये आगे बढ़ते हैं। इसी लाल झण्डे के नीचे रूस के मज़दूरों, किसानों ने संगठित हो कर लेनिन के रहनुमाई मार्क्सवादी सिद्धान्त को अमली जामा पहनाते हुये लाखों मज़दूरों ने शहीद हो कर सन् १९१७ ई० ७ नवम्बर में क्रान्ति किये। अपने ख़ूनों से झण्डे की सुर्ख़ी बढ़ाते हुये वहाँ की सरकार ज़ारशाही और उनके छोट भैय्या ज़मींदारों,

कारखानेदारों, तालुक़ेदारों का बेड़ा ग़र्क करके, मज़दूरों-किसानों का राज क़ायम किये।

उसके बाद चीन के मज़दूरों-किसानों ने संगठित हो कर हज़ारों की क़ुर्बानी देते हुये सन् १९२७ ई० में इंक़लाब किये। उस इंक़लाब में चीन के तिहाई एक भाग में लाल झण्डे के नीचे ग़रीबों, मज़दूरों, किसानों का राज क़ायम किये।

उसी लाल झण्डे को बम्बई के मज़दूरों ने सन् १९२१ ई० बम्बई शहर में लहराया और लाल बावटा युनियन क़ायम की। उस लाल बावटा युनियन के नेतृत्व में बम्बई के जंगजू मज़दूरों ने कई हड़तालें करके १४ घण्टे रोज़ काम के बजाय ९ घण्टे कराये। आज हिन्दुस्तान में जो कुछ मज़दूरों को सुविधायें दिखाई देती हैं वह लाल झण्डे की रहनुमाई से।

२४ अप्रैल सन् १९२८ ई० को ६ माह की हड़ताल बम्बई के मज़दूरों ने की। उस हड़ताल की रहनुमाई का० डांगे और उनके साथी कम्यूनिस्टों ने की। लेखक ने भी उस ६ माह की हड़ताल में बम्बई के जहाजों में कोयला, पत्थर में मजूरी किया। आज दुनिया के पूर्व, पच्छिम, उत्तर, दक्षिण ही नहीं भारत के कोने-कोने में लाल झण्डा* लहरा रहा है।

फिर यह लाल झण्डा विदेशी क्यों! आज दुनिया भर के मेहनतकशों का सिर्फ़ एक लाल झण्डा है। दुनिया की तवारीख और लाल झण्डे की तहरीक़ आज इतनी आगे बढ़ चुकी है कि हम मज़दूर ही नहीं तमाम मेहनतकश वर्ग तुम्हारी या तुम जैसों की सुधारवादी सबक़ सुनने को तैयार नहीं।

इधर साल भर में भोलेभाले मज़दूरों से मास्टर, जाबर, सुपरवाइज़र के ज़रिये धौंस, धमकी से तीन रुपये ठग लेते हो। और उधर मिल-मालिकों के कोठियों से मज़दूरवर्ग के पेट पर छूरा भोंकने के

*देखिए मेरा लाल शराब और लाल झन्डा, अध्याय छठवाँ।

रुपयों की गठरियाँ सरकाते हो। लेकिन तुम्हारी मज़दूरवर्ग विरोधी नीति अब आम मज़दूर समझ रहे हैं। थोड़े ही दिन में तुम्हारे संघ सुधारवादी जाल का जनाज़ा निकलने वाला है।

इसी माफ़िक तुम्हारे भाई-बन्धु, राजा, नवाबों, ज़मीन्दारों की हाँ में हाँ मिलाते हुये कहीं-कहीं किसानों को भी बरगला रहे हैं। उनका भी जनाज़ा किसान उसी माफ़िक निकालेंगे जैसे तुम्हारे जनाज़े को मज़दूर।

नेता गुलछर्रे मल—"भैया मोल्हू, ये मज़दूर सभा वाले (कम्यूनिस्ट) छोटे-बड़े जलसों-सभाओं में जोशीले तक़रीरों में कहते हैं कि मिल-मालिक मज़दूरों के दुश्मन हैं। पर मैं पूँछता हूँ कि वह बेचारा मिल-मालिक दुश्मन कैसे! अरे ये मिल-मालिकों को बाप समझो बाप। पहिला बाप वह है जो तुम्हें पैदा करके छोड़ दिया, दूसरा बड़ा बाप मिल-मालिक कारख़ानेदार हैं। जब तुम लोग दिहातों (गाँवों) से आते हो तो वह नौकरी देता है, यही नहीं जब तक तुम लोग मज़दूर मरते नहीं वह काम से अलग नहीं करता। तुम सब मज़दूरों के लिये, बच्चों के लिये, स्कूल, पुस्तकालय, अस्पतालें खोले हैं। फिर वह बेचारा दुश्मन कैसे ?"

मोल्हू—"तुम ग़लत बात कह रहे हो (नेता गुलछर्रे मल)! मज़दूर मेहनत करता है। उसके एवज़ में मिल-मालिक कारख़ानेदार ज़िन्दा रखने के लिये कुछ टुकड़े डालता रहता है। कारख़ानेदार मज़दूरों के मेहनत से मुनाफ़ा कमाते हैं। मिल की हड़तालों में सरकार की फ़ौज पुलिस की मदद से हड़तालें कामयाब करने के लिये लाठियाँ-गोलियाँ चलवाते हैं।

अस्पताल, स्कूल, पुस्तकालय ही नहीं मिल भी और उसके रहने की कोठी, बाग़-बँगले, ऐशो-अशरत, आराम की चीजें, यहाँ तक कि उसकी फूली हुई तोन्दे मज़दूरों की मेहनत, ख़ूनों से ऊँची होती है।

ये निकम्मे मिल-मालिक, कारख़ानेदार, बैठेखाऊ ख़ुद काम नहीं

करते बल्कि दर्जनों मज़दूर सेवा-टहल के लिये नौकर रखते हैं। ये ज़ालिम हत्यारे मज़दूरों के बाप नहीं दुश्मन हैं। ऐसे निकम्मे अपाहिजों को पेट्रोल डाल के जला देना होगा! इनका नामोनिशान मिटा देना होगा!!

आजकल हिन्दुस्तान में पूँजीवाद जवानी पर हैं। ये लोग चालाकी, धूर्त, बेइमानी से मज़दूरों को ठगते और लूटते हैं। लेकिन इनके लूटने और चोर-डाकुओं के लूटने में थोड़ा फ़र्क है। वह फ़र्क इस तरह है (नेता गुलछर्रे मल)।

चोर-डाकू किसी के माल को खुले तौर लूट लेते हैं या रात में सेंध देके लूटते हैं पर ये तुम्हारे बड़े लाला जी मिल-मालिक, कारखाने-दार, चालबाजी से ४ रुपये के कच्चे माल को ५० रुपये में बनवा कर आठ मज़दूर को मज़दूरी देकर बाक़ी सब हड़प जाते हैं। क्या ये ज़ालिम मज़दूरों के बाप हैं? बाप-बेटे का सबक सिखाने वाले सुधार-वादियों का बेड़ा ग़र्क हो। और नेता गुलछर्रे मल तुम जैसे लोग मिल-मालिकों, कारखानेदारों के रखवाले कुत्ते हो।"

नेता गुलछर्रे मल—"मोल्हू, तुम मुझे क्यों कुत्ता बना रहे हो?"

मोल्हू—"जिस तरह घरों की रखवाली रात को कुत्ते करते हैं। उसी तरह दिन में मिल-मालिकों, कारखानेदारों के रखवाले तुम बड़े कुत्ते हो।"

नेता गुलछर्रे मल—"चेतनसिंह कौन खाते में काम करते हो?"

चेतनसिंह—"तरासन खाता (Spinning) में।"

नेता गुलछर्रे मल—"चेतनसिंह, तुम्हारे साथी मिल में काम करने वाले भी राजनैतिक बातों में बड़े पक्के हैं।"

चेतनसिंह—"क्यों न पक्के रहे? हर हफ़्ता क्लास चलती है क्लास।"

नेता गुलछर्रे मल—"किताबें कौन-कौन पढ़ते हो चेतनसिंह?"

चेतनसिंह—"किताबें निम्न प्रकार से हैं :—"

१०

निरहू डाकू क्यों हुआ ?

पापी पेट के खातिर निरहू चैत-बैसाख के बारह बजे की तपती दुपहरिया में, सावन-भादों के मूसलाधार वर्षा में, पूस-माघ की ठण्ढक आदि कष्टों को झेलते हुये काम करता था। इतना मेहनत करने के बाद उसे मिलता क्या था ? दोपहर को काली कड़ाही में भुना हुआ मुट्ठी भर चना, शाम को एक सेर मतौना कोदो (जिसमें सात भूसी)। लेकिन मजूरी भी रोज़ नहीं, कभी काम मिल गया तो मतौना कोदो भी मिल गया। कभी-कभी तो महीनों बेकार रहना पड़ता था। क्या करे ! चोरी या फ़ाक़ाकशी।

चोरी करने से ज़मीन्दार मारता था, पुलिस के सुपुर्द कर देता था। जेल वाले उसे क़िस्म-क़िस्म की सज़ायें देते थे। पण्डित जी उसे पापियों में गिनते थे। साथ ही साथ अगले जन्म के लिये उसके कर्म-काण्ड में लिख देते थे 'नरक निवास'।

यह है हमारे समाज का क़ानून और न्याय !

निरहू के बाप की ज़मीन अकाल के ज़माने में कुछ चालाक लोगों ने सात वर्ष का पुराना कोदो और अकड़ा, मुनमुन खिला के छीन ली। उसका अन्न पैदा करने का औज़ार, पैदावार का साधन उससे छीन लिया गया। उसका किसानी का सारा रास्ता बन्द कर दिया गया था। उसे एक तरह का सर्वहारा बना दिया था। फिर निरहू को खेत कहाँ से मिलते ?

मजबूरन उसे शहर की गलियों में खाक छाननी पड़ी, दर-बदर उसे ठोकर खानी पड़ी। दो-दो रोटियों के टुकड़ों पर उसे दिन भर खून-पसीना बहाना पड़ा। बाज़ारों में भटकते समय निरहू बड़ी-बड़ी दुकानों, महलों की तरफ़ आँखें उठा के देखता था, तो गद्दियों के पास

बैठे हुये कुत्ते दूध और डबल रोटी से खेलवाड़ करते थे। उस वक्त निरहू के मुँह में पानी भर जाता था। उसकी जीभ चलने लगती थी। दिन भर शहर में चक्कर मारने से निरहू को किसी क़िस्म की मजूरी नहीं मिली, भूख से निरहू तड़फड़ा रहा था, लेकिन करे क्या! दिल मसोस के बैठ जाता था। सोचता था क्या करें! क्या खायें ? कैसे जियें ?

रात को बारह बज चुके थे, एक बजने वाला था। दुकानें बन्द हो रही थीं। निरहू भी भूख से तड़फता हुआ शहर में चक्कर काट रहा था। एक सूनी दुकान देख कर दिन भर की आमदनी गल्ले की पेटी निरहू लेकर भाग चला। उसके पीछे कई एक आदमी लगे लेकिन उस भूतनाथ को कहाँ पाते।

निरहू शहर से बाहर निकल जाने के बाद दूर चलकर अरहर के खेत में बैठ कर पेटी खोल कर पैसा-रुपया गिनना शुरू किया। तीन बजे रात से पाँच बजे रात तक निरहू नोट पैसा रुपया बराबर नहीं गिन पाया था। पैसे के हौंसिले से उसकी भूख भी जाती रही। सबेरा होने पर निरहू रुपया-पैसा सब धोती में बाँध के गल्ले की पेटी तोड़ ताड़ कर फेंक कर दूसरे शहर का रास्ता लिया।

खाते-पीते निरहू तीन दिन के बाद एक बड़े शहर में पहुँचा। अभी भी निरहू का घर फुटपाली ही था। सफ़ेद कपड़ा वालों से निरहू को बहुत घृणा होती थी। इसलिये उसने अपने ही माफ़िक बेघर वाले लोगों को खिला-पिला कर दोस्ती करनी शुरू की। रास्ता चलते भीख माँगने वालों को निरहू पैसा देने के बजाय कुछ दुकान से खरीद कर खिलाया करता था।

निरहू दिन में तीन-चार दफ़े खाना खाता था। इस तरह एक महीने में वह अच्छा ख़ूब तगड़ा-सा जवान हो गया। कंगालों के दल में निरहू का बोल बाला था।

बेघर वाले लोगों की एक टोली १० आदमी की तैय्यार हो गई थी। टोली के लोग निरहू को अपना सरदार समझते थे। क्यों न समझें ? खाना जो खिलाता था।

अब आहिस्ते-आहिस्ते निरहू की कमर में बँधा हुआ रुपया भी खत्म होने लगा था। उसे दिन-ब-दिन फ़िक्र-सा लगता जा रहा था। अब इस टोली का खर्च कैसे चलेगा ? रात को १० बज चुके थे। टोली के सब लोग इकट्ठे बैठे हुये थे। निरहू ने कहना शुरू किया—साथियो ! अब हमारे पास जो कुछ रुपया-पैसा था, वह खाने-पीने में खत्म हो गया। इसलिये अब खाने-पीने के लिये प्रबन्ध करना चाहिये।

साथियो ? अगर मैं कोई काम करना चाहूँ तो क्या आप लोग साथ दे सकते हैं ! टोली के लोगों ने कहा, "ज़रूर साथ देंगे। अगर प्राण की बाज़ी लगानी पड़े तब भी साथ नहीं छोड़ेंगे।

निरहू अपनी टोली के साथियों की बातें सुन कर बहुत ख़ुश हुआ। उसकी हिम्मत और बढ़ चली।

निरहू—"साथियो ! आज रात को शहर में चलना है। लक्खू सेठ के कोठी में बहुत रुपया जमा है। उस दिन जब हम लोग शहर में चक्कर काट रहे थे तो रुपयों की आवाज़ झनाझन हो रही थी। आज अभी चल कर रुपया लाना है। आप लोग घबड़ाइयेगा नहीं। अगर किसी ने अपने साथियों को पकड़ लिया तो सब मिल कर उसे मार कर अपने साथी को छुड़ायेंगे, फ़ुर्ती और होशियारी से काम करना होगा। आप लोग किसी बात की फ़िक्र मत करियेगा। मैं हमेशा आप लोगों के साथ रहूँगा।"

इस तरह बातें करते-करते क़रीब रात को १ बज चुका था। टोली के लोग निरहू के साथ चल दिये। रास्ते में आगे चल कर निरहू दो, दो, आदमी का गुरूप बना के सब से आगे खुद चल कर लक्खू सेठ के कोठी के नीचे जा पहुँचा। दरवाज़ा चारों तरफ़ से बन्द था। भीतर बिजली जल रही थी। सड़क पर पुलिस के गश्त की आवाज़ हो रही थी। निरहू टोली के लोगों को साथ लेकर बग़ल के पाखाने में घुस गया।

पुलिस के चले जाने के बाद पाखाने से सब के सब निकल कर लक्खू सेठ के महल में घुसने के लिये सीढ़ी के सहारे से चले। निरहू खिड़की पर जा पहुँचा। इस तरह अकेला निरहू सेठ के घर में घुस

गया। पीछे से उसकी टोली ने भी आहिस्ते-आहिस्ते ऊपर चढ़ना शुरू किया। जब टोली के सब लोग ऊपर जमा हो गये तो वे कोठी के अन्दर माल की तलाश करने लगे। बाहर कोई चीज़ सोना, चाँदी, रुपया दिखाई ही नहीं देती थी। महल के एक कमरे में सेठ-सेठाइन सो रहे थे। निरहू माल न मिलने के कारण बेचैन था। उसने अपने साथियों को अँगुली से इशारा किया सब आगे बढ़े। निरहू ने सोते हुये सेठ-सेठाइन के गले पर हाथ रक्खा कि टोली के सब जवान उन पर चढ़ बैठे और मुँह बन्द कर दिया।

निरहू (सेठ से)—"हम तुम्हारे पास रुपया लेने आये हैं जल्द बताओ! नहीं तो गला घोंट देंगे, दम निकाल देंगे!"

सेठ (घबड़ा कर)—"चाभी गद्दे के नीचे से उठा कर दे दिया और तिजोरी की तरफ़ इशारा किया।"

निरहू अकेला तिजोरी खोल कर नोट के बण्डल और कुछ रुपया सोने-चाँदी के जेवरात बाहर निकाल कर, गठरी बाँध कर, सेठ-सेठाइन को पलंग ही पर रस्सी से जकड़ बाँध कर, ख़ुद गठरी ले कर, दरवाज़ा खोलकर सीढ़ी के सहारे से, टोली के साथ नीचे उतर कर गया। दो-दो का गुरूप करके सभी शहर से बाहर निकल गये। और चलते-चलते एक जंगल में अपना डेरा डाल दिया। वे आसपास के गाँवों से खाने का सामान खरीद कर लाते और उसी जंगल में मंगल करते थे।

इस तरह निरहू अपनी टोली में और जवान भरती करके एक भारी डाकू के नाम से मशहूर हुआ। कई दफ़े उसे और उसके टोली के जवानों को सज़ायें हुई। लेकिन उन्होंने तब भी अपनी टोली के साथ डाका डालना बन्द नहीं किया। कभी-कभी तो जंगल में रसद कम हो जाने पर निरहू बड़े-बड़े ज़मींदारों के पास हुक्मनामा भेज देता था कि फलाँ-फलाँ चीज़ें (रसद) भेज दो! नहीं तो फलाँ तारीख़ को, फलाँ दिन को फलाँ वक्त, तुम्हारे यहाँ डाका डालेंगे। किसानों, हरवाहों के ख़ून चूसने वाले ज़मींदार; तालुक़ेदार घबड़ा कर निरहू के हुक्म-

नामों के बमूजिब वैलगाड़ियों पर रसद लाद-फाँद के निरहू के जंगल में भेज देते थे।

डाकू निरहू अपने बहादुरों के दल सहित ज़मींदारों, सेठियों के यहाँ डाका डाल के, लूट-पाट के, ग़रीबों-मुहताजों को बाँट कर जंगल में रहता था।

डाकू निरहू उस राज में अमीरों से लूट कर ग़रीबों में बाँट देता और अपने दल के लोगों को भी मालपुवा खिलाता था।

राज्य के साहूकारों, ज़मींदारों ने राजा के यहाँ बड़ी-बड़ी शिकायतें भेजीं। राजा ने अपने फ़ौज-पल्टन के ज़रिये जंगल को घिरा कर निरहू को पकड़ मँगाया।

राजा साहब—"तुमने हमारे राज में बहुत लूट-मार मचा रक्खा है। राज में बसने वाली प्रजा की शिकायतें रोज़ आ रही हैं। बता तुझे क्या किया जावे ? क्या सज़ा दी जावे ?"

डाकू निरहू—"मैंने सज़ा पाने का आज तक कोई काम नहीं किया। हाँ, इस वक्त मैं तुम्हारा बन्दी बन चुका हूँ, इससे जो चाहो सो कर सकते हो।"

राजा साहब—"तुमने हमारे राज्य में कुछ नहीं किया ? लाखों रुपये की सम्पदा लूटी, धन माल लूटा। सैकड़ों की जानें लीं और कितने गाँवों में आग लगा कर उसे स्वाहा करते हुये जंगल में मंगल कर रहा है। फिर भी मेरे सामने कह रहा है कि हमने कुछ नहीं किया ?"

डाकू निरहू—"अगर हमने कुछ लोगों को लूटा। तो आपने अपनी राजसत्ता बढ़ाने की गर्ज़ से हज़ारों को लूटा। अगर हमने कुछ लोगों को जान से मारा। तो आपने अपनी राजसत्ता बढ़ाने के गरज़ लड़ाई लड़कर हज़ारों बेकूसर ग़रीब जनता की जानें लीं। अगर हमने कुछ १५,२० गाँव जलाये तो आपने लड़ाई के अन्दर हज़ारों बड़े-बड़े गाँवों, शहरों को खाक में मिला दिया है। ऐसी हालत में सबसे बड़ा खतावार आप हैं या मैं ?"

राजा साहब—"मैंने जो कुछ भी किया वह राज्य क़ानून के मुताबिक आम प्रजा के हित के लिये किया है। अगर्चे मैंने लोगों को लूटा है तो करोड़ों रुपया, अन्न, कपड़ा इनाम और दान दिया है। अगर्चे मैंने शहरों, गाँवों को जलाया है तो नये गाँव और शहर आबाद किये हैं। पर तूने डाका डालने, मार-पीट करने के अलावा कुछ नहीं किया।"

डाकू निरहू—"आपके हाथ में राज्य की ताक़त है, फ़ौज है, पल्टन है, रुपया और धन है। आप राजा साहब हैं जैसा चाहें वैसा अर्थ निकाल सकते हैं ? नहीं तो जो काम हमने अपने पचास जवानों को साथ लेकर किया वह आपने हज़ारों लाखों फ़ौज पल्टन के ज़रिये किया है। मैं अपनी इस उमर में सैकड़ों ज़मींदारों, सेठों बड़े-बड़े महाजनों के धनों को लूट कर ग़रीबों को बाँट देता हूँ। और मैं भिखमंगों की टोलियों को आगे बढ़ाते हुये उनके आराम रक्षा के लिये दिलोजान से तैय्यार रहता हूँ। मुझ में और आप में फ़र्क यही इतना है कि आप बड़े डाकू और मैं छोटा डाकू हूँ।"

राजा की गर्दन शर्म से झुक गई।

———

११

गुरदीन पासी

गुरदीन पासी फूलपुर गाँव में सबसे ग़रीब आदमी था। उसकी बुढ़िया कुबरी माँ, बीबी और दो बच्चे थे। उसके पास धन के नाते ३ बीघा खेत और एक बैल था। लेकिन दो-तीन साल से खेती की पैदावार ठीक तरह से नहीं होती थी। जो कुछ ग़ल्ला (अनाज) पैदा होता था, तह मालगुजारी में चला जाता था। एक साल गुरदीन ने मालगुज़ारी अदा करने में देरी कर दी। ज़मींदार ने सिपाहियों के ज़रिये गुरदीन को पकड़ मँगाया, और गाली फटकार देकर उसे तीन दिन की और मोहलत दी।

गुरदीन मालगुज़ारी कहाँ से देता? घर में जो अनाज था वह सब खा-पी के बराबर हो गया था। अभागे गुरदीन को क़र्ज़ भी न मिला। तीन दिन बीत गये गुरदीन बहुत दौड़ा-धूपा लेकिन चार आना ब्याज पर भी रुपया नहीं मिला। ठग मारा-सा मूड़ी नीचे करके अपने मड़ैय्या में मनमार के बैठा था।

चपरासी—"गुरदीन, गुरदीन, बाहर निकल, ठाकुर साहब मालगुज़ारी के लिये बहुत सख्ती कर रहे हैं। रुपया दो।"

गुरदीन—"भैय्या, रुपया नहीं मिला, चार आना ब्याज देने पर भी किसी ने नहीं दिया।"

चपरासी—"अच्छा, तो चलो दरबार में।"

गुरदीन—"दो दिन की मोहलत और दे देव भैय्या, कहीं और देखें।"

चपरासी—"या तो मालगुज़ारी दो, नहीं तो मेरे साथ चलो!"

गुरदीन—"भैय्या एक दिन की मोहलत दे देव।"

चपरासी—"अब एक घण्टे की मोहलत नहीं मिलेगी, चल उठ,

मेरे साथ। गुरदीन उठने वाला ही था कि चपरासी ने हाथ पकड़ के एक झटका दिया और दो लात मार कर कहा कि चल साले। गुरदीन दिल मसोस के चपरासी के पीछे चल कर ज़मीन्दार (ठाकुर साहब) के दरबार में हाज़िर हुआ।"

ज़मीन्दार—"गुरदिनवा रुपया क्यों नहीं लाया?"

गुरदीन—"सूखा पात के वजह से जिन्स कम पैदा हुआ। सिर्फ़ ७ मन सब मिला के सतन्जा अनाज पैदा हुआ था, वह बच्चे खा, पी गये।"

ज़मीन्दार—"बेईमान, साला, सारी पैदावार खा गया, और माल-गुज़ारी भूल गया। चपरासी! निहुरा के साले को पचास पनही लगाओ!!"

चपरासी ने हुक्म पाते ही देशी चमौधा पनही से गुरदीन को निहुरा के पीटना शुरू किया। क़रीबन् १० पनही पड़ते ही गुरदीन बेहोश उतान पड़ गया। सिपाही डर गया कि मुजरिम मर गया, उसने मारना बन्द कर दिया।

ज़मीन्दार ने गुस्से में कहा—"अबे मारना क्यों बन्द कर दिया?" सिपाही ने फिर उसे निहुरा कर पीटना शुरू किया। गुरदीन की दर्द-भरी चिल्लाहट सुन कर आसपास के लोगों के कलेजे दहल उठे। पेड़ के पत्त भी सुन्न हो गये। लेकिन उस ज़ालिम ज़मीन्दार बैठेखाऊ का दिल नहीं दहला। पिटवाते-पिटवाते जब समझ लिया कि अब मर जायगा तब छोड़ दिया।

गुरदीन एक घण्टे तक उसी जगह बेहोश पड़ा रहा। ज़मीन के सहारे बैठे-बैठे कुँये के पास जाकर किसी से एक लोटा पानी अँजुरी से पी कर कुँये के पास पड़ गया। शाम का वक्त. था कुछ ठण्ढी हवा के लगने से उसके दिल में कुछ हिम्मत आई, वहाँ से उठ कर पास के बग़ीचे में जा बैठा। बैठे-बैठे वहाँ सो गया। सबेरा हुआ तो वह घर के बजाय लँगड़े-लँगड़े शहर की राह चला।

गुरदीन ने अभी रेलगाड़ी देखी ही नहीं थी, लेकिन उसकी हिम्मत

और दिल कह रहे थे कि बग़ैर टिकट कानपुर चलें। गावों में भीख माँगते खाते गुरदीन एक स्टेशन पर आ पहुँचा और वहाँ पर मुसाफ़िर-खाना के बग़ल बाहर दूब के फ़र्श पर सो गया। लेकिन उसे नींद कब आती उसे कानपुर जाने की फ़िक्र लगी थी। एक घण्टा ही हुआ था कि गाड़ी स्टेशन पर आ पहुँची। गुरदीन की अक़्ल काम नहीं करती थी, वह भौचक्का-सा खड़ा था कि पास में आता हुआ एक काली कमीच वाला कुली दिखाई दिया।

गुरदीन—"भैय्या, मैं अनजान आदमी हूँ, पैसा नहीं है, नौकरी के लिये कानपुर जाना है। किसी तरकीब से गाड़ी में हमें बैठा दो!"

कुली (काली कमीच वाला)—अच्छा, तुम्हें एक तरकीब बताता हूँ। अगर उस माफ़िक चले तो दो ही दिन में कानपुर पहुँच जाओगे। कोई पकड़ नहीं पायेगा?"

गुरदीन—"भैय्या! कैसे, कैसे, कैसे....बताओ?"

कुली—"देखो ख्याल रखना। जब गाड़ी स्टेशन पर खड़ी हो जायगी तो पाखाने में घुस जाना।"

गुरदीन—"भैय्या, पाखाना किसे कहते हैं।

कुली—"यार तुम पूरे बुद्धू ही हो। अरे, जिसमें लोग चलती गाड़ी में टट्टी-पेशाब को जाते हैं उसी कोठरी को पाखाना कहते हैं।"

गुरदीन—"अच्छा भैय्या, चल कर मुझे बैठा दो!"

कुली ने गुरदीन को साथ ले डब्बे में घुस कर उसे बैठा दिया और पाखाना भी बता दिया। पास में बैठे हुये मुसाफ़िर से गुरदीन को कानपुर तक पहुँचा देने के लिये नम्रतापूर्वक विनती कर के वह बाहर आने वाला था कि गुरदीन ने हाथ जोड़ के उसके पाँव पर सर रख दिया।

कुली—"घबड़ाओ मत, ये बाबू जी तुम्हें कानपुर पहुँचा देंगे। लो, दो आना पैसा रास्ते में कुछ खा लेना। और वह डब्बे से नीचे उतर गया।"

गाड़ी चलने लगी और सिर्फ़ ४ मील की दूरी पर पहुँची थी कि

बाबू जी ने अपने बँधे बिस्तरे को खोल कर सीट पर ख़ूब झोलदार बिछा कर गुरदीन को सीट के नीचे लेटा दिया। इस तरह से गुरदीन बाबू जी के साथ कानपुर स्टेशन पार कर के शहर में जा पहुँचा।

गुरदीन पागलों की तरह शहर की गलियों में रास्ता नापा करता था। लेकिन उसे कहीं नौकरी नहीं मिली। भूख से उसकी अँतड़ियाँ कलबला रही थीं। उसने अपने ही माफ़िक दिहाती, गँवार समझ के सामने से आते हुये टोकरी वाले से कहा—

गुरदीन—"भैय्या हमें भी कोई काम दिलावो, आज दो दिन से भूखा हूँ। कल गाड़ी से उतरा हूँ, मेरी कहीं किसी से यहाँ पहचान नहीं है।"

टोकरीवाला—"अच्छा, मेरे साथ चलो। सब्ज़ी मारकेट में काम मिल जायगा। घबड़ाओ मत। पहले दफ़ा ऐसे ही होता है। तुम तो दो दिन के भूखे हो, मैं घर से १ सेर चना लेके चला था। २० दिन पैदल चल कर कानपुर आया और ४ दिन लगातार बग़ैर अन्न के रहा। भैय्या वहीं सब्ज़ी मारकेट में सब्ज़ी उठाने की मजूरी दो आना मिली तब पाव भर सत्तू खाया था। गुरदीन को टोकरीवाले (झल्लीवाल) ने साथ लेकर सब्ज़ी-मारकेट में ले जाकर अपनी टूटी हुई दूसरी टोकरी दे कर उसे सब्ज़ी ख़रीदारों के घर पहुँचाने की मजूरी कराके ख़ुद भी अपने काम में लग गया।"

गुरदीन इस तरह किसी दिन आठ आना, किसी दिन छः आना और किसी दिन चार आने की कमाई करता था। उसमें तो उसका ख़ुराकी ही चलना मुश्किल था। क्योंकि महँगी चीज़ें बिकतीं थीं और वह बेघर का था। उसका तो फुटपाली या स्टेशन के पास के पेड़ के नीचे ज़मीन पर बिस्तरा रहता था।

गुरदीन घर छोड़ कर ज़मींदार की मालगुज़ारी अदा करने के ग़रज से शहर में नौकरी करने आया था। लेकिन जब सब्ज़ी मारकेट की नौकरी से उसका पूरा ख़ुराकी ही नहीं चलता था, तो वह वहाँ से

दूसरी नौकरी की तलाश में बढ़ा। उसने सामने आते हुये हाथ ठेला गाड़ी वाले से मुलाक़ात की।

गुरदीन—"भैय्या, मुझे भी कहीं हाथ ठेले गाड़ी की नौकरी करा दो।"

ठेला वाला—"बहुत मेहनत करनी पड़ती है, मसाला ठण्ढा हो जायगा।"

गुरदीन—"हम यह काम कर लेंगे, मुझे काम दिला दो!"

ठेला वाले ने गुरदीन को साथ लेकर ठेला मालिक के यहाँ जाकर एक रुपया रोज़ भाड़े पर एक हाथ ठेला गाड़ी दिला दिया। इस तरह ठेला वाले के साथ गुरदीन भी अपना भाड़े का ठेला लेकर बाज़ार की तरफ़ चल दिया। और उसने दिन भर में ढ़ाई रुपये की मजूरी किया। शाम को बाज़ार से वापस होकर ठेला-मालिक को एक रुपया रोज़ का भाड़ा देकर उसके पास डेढ़ रुपया बाक़ी बचा।

गुरदीन ख़ुशियाली में था। वह सोच रहा था कि अब कुछ दिन में मेरी दशा ठीक होने वाली है, उसने एक आना पैसा ख़र्च कर घर को ख़त भेज दिया।

गर्मी का मौसम था। प्रचण्ड धूप थी। सर उसका नंगा था। पाँव के नीचे सिमेंट और डामर की गर्म धधकती हुई सड़क थी। और लू की, हू-हूकार थी। गुरदीन ठेला लेकर आगे बढ़ रहा था। उसका यह नया रास्ता था।

सड़क टेढ़ी और ढालू थी। आहिस्ते-आहिस्ते चल कर ढालू सड़क पार कर चुका था। उस समय वह ज़मीन्दार के दरबार की मार का ख़्याल कर रहा था। उसके पाँव आगे बढ़ रहे थे। सामने से एक मोटर ने आ धक्का-सा दिया। उसकी गाड़ी अलग जा गिरी और वह उसी जगह पिस गया। सड़क ख़ून से तर थी। आस पास आदमियों की भीड़ थी।

आदमियों की भीड़ देख कर पुलिस वाला आया और उसने जाँच करना शुरू किया। गुरदीन की फटी गन्दी बहकटी में एक

लिफ़ाफ़ा था। लिफ़ाफ़े में एक बदामी रंग का काग़ज़ था। उसमें लिखा हुआ था।

बीवी के तरफ़ से—"बग़ैर किसी से मिले आप परदेश चले गये। अभी तक हम घर भर के लोग बेचैन थे। आप जल्दी चले आना।"

बच्चों की तरफ़ से—"काका मेरे लिये खिलौना लेते आना।"

माँ कुबरी ने लिखा था—"भैय्या गुरदीन, ज़मींदार बहुत तंग कर रहा था। मालगुज़ारी नहीं मिलने पर बैल हँका लिया है। रुपया जल्द भेज दो। मालगुज़ारी अदा करके बैल छुड़ा लावें, नहीं तो बैल को लिल्लाम कर देगा। तुम तो होशियार हो, बेटा!"

× × ×

पाँच मिनट बाद मेहतर की गाड़ी उसकी लाश उठा ले गई!

This is the end of difficulties.

Note

This book is very useful Book for good boys not for bad boys they take bad advise by this book. But this book is not like that.

Please Read this book. Be very impatient

हमारा कहानी साहित्य